हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकरका ७० वाँ ग्रन्थ।

चन्द्र-कला

[उच्च श्रेणीकी सुन्दर, भावपूर्ण और मौलिक कहानियाँ]

लेखक—
श्रीचन्द्रगुप्त विद्यालंकार
गुरुकुल-काँगड़ी

प्रकाशक—
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय

आषाढ़, १९८६ वि०

जुलाई, सन् १९२९ ई०

मूल्य चौदह आने
सजिल्दका १।=)

प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी, मालिक
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, बम्बई ।

मुद्रक—
मंगेश नारायण कुलकर्णी,
कर्नाटक प्रेस,
३१८ ए, ठाकुरद्वार, बम्बई

कुछ वाक्य

साहित्यिक रंग-मंचपर इस तरह बिना बुलाये आ धमकनेमें मैं कुछ झिझक अनुभव कर रहा हूँ। एक तो आया ही ज़बर्दस्ती हूँ, उसपर जो चीज़ लाया हूँ वह भी बिल्कुल मामूली है। परन्तु एक बात जरूर कहूँगा—और वह यह कि अपने भविष्यकी उज्ज्वलतापर मुझे पूर्ण विश्वास है; इसीलिये अपनी ये मामूली-सी कृतियाँ इस बड़े बाज़ारमें लानेका साहस कर सका हूँ। ये कहानियाँ मैंने अपनी २१ से लेकर २३ वर्षकी उमर तक लिखी हैं, इस समय भी मेरी आयु केवल २४ बरसकी ही है। कहानियाँ लिखनेके लिये सबसे अधिक आवश्यक चीज़ है दुनियाँका अनुभव; और मैंने अभी तक दुनियाँमें प्रवेश ही नहीं किया।

कहानी-जगत्‌में परिचयकी साख प्राप्त करनेके उद्देश्यसे यह ज़रासा मूलधन लेकर उपस्थित हुआ हूँ। सम्भव हुआ तो इसके आधारपर कहानियोंके काल्पनिक संसारमें अपना कारोबार बढ़ानेका प्रयत्न करूँगा।

गुरुकुल काँगड़ी
३ जुलाई, १९२९

चन्द्रगुप्त विद्यालंकार

सूची

चन्द्र-कला

मचाकोसका शिकारी

मचाकोस नगरकी सबसे ऊँची पहाड़ीपर एक प्रभावोत्पादक विशालकाय शिलामूर्तिके नीचे ये वाक्य खुदे हुए हैं—

"नगरका पिता"

"उस अज्ञात देवताकी पुण्यस्मृतिमें, जो न जाने संसारकी किस जातिमें सदैव अकेला रहनेके लिये पैदा हुआ था। जो इसी स्थानपर—जब यहाँ सुन्दर नगरकी जगह एक घना जंगल था—वन-देवताकी तरह रहता था; जो एक बार अचानक प्रकट होकर सर मोरिफ़ महोदयको यहाँ इस नगरके बसानेका आदेश दे गया।"

यह शिलामूर्ति अत्यधिक भव्य है। मूर्तिके ऊँचे चबूतरेपर एक ओर एक बब्बर शेरने किसी अँग्रेज़को अपनी छातीके तले दबा रक्खा है। उससे करीब दो गज़ दूर एक सुन्दर योद्धाकी मूर्ति है, यह योद्धा अपनी तलवारसे उस शेरको मार रहा है। यह मूर्ति ग्रीक देवताओंके ढँगपर

बनाई गई है। मूर्ति बिलकुल श्वेत है, वह इतनी अधिक भव्य है कि देखनेपर वह एक कल्पित देवताका चित्रमात्र ही प्रतीत होती है।

मूर्तिमें शेरके नीचे जो अँग्रेज दबा हुआ पड़ा है, उसका नाम है—'मोरिफ़'। इन्हीं सर मोरिफ़ महोदयने ही आजसे करीब ४० बरस पूर्व इस सुन्दर नगरकी आधार-शिला स्थापित की थी।

(१)

रिचर्ड और ब्रेक दोनों एक दूसरेके अभिन्न मित्र थे। बचपनसे ही दोनों एक साथ एक सैनिक अनाथालयमें पले थे। उनके वास्तविक माता-पिता कौन हैं, यह बात किसीको ज्ञात नहीं थी। दोनों ही शरीरसे बलवान्, स्वभावसे क्रोधी और मस्तिष्कसे कमज़ोर थे। उनकी घुड़सवार बटेलियनके अन्य सम्पूर्ण सैनिक उनसे घनिष्ठता बढ़ाते हुए घबराते थे। रिचर्ड और ब्रेकको भी इस बातकी कोई विशेष आकांक्षा न थी, वे दोनों स्वयं अपनेमें ही पूर्ण थे। मनुष्य अपने मित्रोंसे जितने लाभ उठा सकता है, वे सब उन्हें आपसमें ही प्राप्त हो जाते थे। आवश्यकता या इच्छा होनेपर वे दोनों परस्पर सहायता, प्रेम, झगड़ा, मार-पीट, रूठना, मान-मनौवल—सभी कुछ कर लेते थे। उनके जिन साथियोंने उन्हें दो विशालकाय फ़रसोंकी तरह एक दूसरेसे लड़ते हुए देखा है, उन्हें आश्चर्य था कि इन दोनोंकी मित्रता स्थिर किस तरह रहती है। सम्भवतः दोनोंकी मित्रताका आधारभूत कारण यह था कि दोनोंमें कोई भाव, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, अधिक देर तक टिकने न पाता था।

सैनिक रहते हुए जितना अधिकतम नियमोंका उल्लंघन किया जा सकता है, उतना उल्लंघन करनेसे ये दोनों बाज़ न आते थे। बटे-

लियनके क्लार्कसे सदैव उनकी लड़ाई रहती थी, रसोइये और कहार उनसे भय खाते थे। मचाकोस छावनीके आसपासकी बस्तियोंमें सिर्फ़ इन्हीं दोनोंके सबबसे उनकी बटेलियन बहुत अधिक बदनाम हो गई थी। साधारणतया दूकानदार लोग ग्राहकोंको देखकर खुश हुआ करते हैं, परन्तु ये दोनों शरारतकी ठोस पुतलियाँ जिस दूकानके सामने जाकर रुकतीं, उस दूकानके मालिकका दिल धड़कने लगता था। इसपर भी इन दोनोंको सौदा खरीदनेका ख़ास शौक़ था। ये लोग दूकानदारसे जिस मालकी बाबत पूछते, प्रायः वह झगड़ेकी सम्भावनासे डरकर उस मालकी मौजूदगीसे ही इनकार कर देता था। मगर दूकानदारोंकी यह चाल भी अधिक दिनोंतक कारगर न हुई। रिचर्ड और ब्रेक दोनोंको इस बातका विश्वास हो गया कि दूकानदार हम लोगोंसे अपना माल छिपाते हैं। यह रहस्य खुल जानेके बादसे वे दोनों और भी अधिक उजड्ड और बेपरवाह बन गये थे।

रिचर्ड और ब्रेकको घुड़सवारीका बड़ा शौक था। वे अन्य सैनिकोंकी तरह घुड़सवार सेनामें केवल रोजी कमानेके उद्देश्यसे ही नहीं रहते थे, उन्हें यह पेशा सचमुच 'मज़ेदार' मालूम होता था। यही कारण था कि सैनिक नियमोंका अधिकतम उल्लंघन करते हुए भी वे दोनों अपने अफसरोंकी दृष्टिमें नीचे नहीं गिर सके थे। दोनों दोस्त अपने घोड़ोंपर सवार होकर, जब मौक़ा मिलता, आसपासकी पहाड़ी घाटियोंके घने जंगलोंमें अबाधित घुड़दौड़ और शिकारका अभ्यास किया करते थे। दोनों ही स्वभावसे बिलकुल निर्भय थे।

(२)

ब्रेक अचानक गुर्राकर बोल उठा—"रिचर्ड! ठहरो।"

रिचर्ड ब्रेककी अपेक्षा ६०—७० गज़ अधिक ऊँचाईपर था; ब्रेककी मोटी आवाज़ सुनकर उसने आश्चर्यसे पीछेकी ओर मुड़कर देखा। अभी दस-पन्द्रह मिनट पूर्व ही दोनों दोस्तोंमें भीषण वाग्युद्ध हुआ था, इस कारण दोनों रूठकर चुपचाप पहाड़की कठिन चढ़ाई पार कर रहे थे। ब्रेक रिचर्डकी अपेक्षा बहुत अधिक भारी भरकम था, इससे वह यह चढ़ाई चढ़ते हुए हाँपने लगा था। उसने अपने घोड़ेपर एक मरा हुआ मोटा-ताजा हिरण भी लाद रक्खा था, इस कारण उसके घोड़ेको यह चढ़ाई चढ़ना और भी अधिक कठिन हो रहा था। रिचर्डको यह आशा कभी न थी कि लड़ाईके दस-पन्द्रह मिनट बाद ही ब्रेक इस प्रकार उसे आवाज़ देकर संधिका प्रस्ताव करेगा। उसने आश्चर्यसे पूछा—"क्यों?"

ब्रेकने कहा—"मुझे प्यास लगी है। यहाँ कुछ सुस्ताकर तब आगे बढ़ा जायगा।"

रिचर्डने ज़रा उपेक्षाका भाव दिखाते हुए उत्तर दिया—"इस पहाड़की चोटीपर पहुँचे बिना मैं आराम नहीं करूँगा।"

ब्रेक नाराज़ हो गया। उसने गरजकर कहा—"तुम्हारे घोड़ेपर कोई बोझ नहीं है न! इसीसे सीधे पहाड़की चोटी तक पहुँचना चाहते हो!"

ब्रेकके इन शब्दोंमें एक विशेष व्यंग था, जिससे रिचर्ड जल उठा। अपने घोड़ेसे कूदकर वह नीचे आ खड़ा हुआ। घोड़ेकी लगाम पकड़ते हुए उसने क्रोधमें भरकर कहा—"धोखेबाज़! बदमाश! मेरा शिकार धोखेसे अपने घोड़ेपर लादकर मुझे खाली घोड़ा होनेका ताना देते हो?"

ब्रेक भी घोड़ेसे नीचे उतर पड़ा। उसने अपना घोड़ा एक पेड़के तनेसे बाँधते हुए कहा—"फिर वही दावा! अभी तो इस झगड़ेका

फैसला किया था। यदि फिरसे लड़नेकी सलाह हो, तो मैं भी तय्यार हूँ।"

रिचर्ड कुछ नहीं बोला। वह भी उसी पेड़के नीचे आकर हरीभरी घासपर बैठ गया।

दोनों दोस्त एक दूसरेसे रूठे हुए थे। कोई कुछ बोला नहीं। दोनों एक ही देवदारके पेड़की घनी छायामें कुछ अन्तर छोड़कर बैठ गये। आज ईस्टरका शुक्रवार था। दोनों मित्र बड़ी आशासे यह सोचकर कि आजकी छुट्टी खूब मज़ेमें कटेगी, प्रातःकाल सूर्योदयके साथ-ही-साथ अपनी बैरेकसे निकल खड़े हुए थे, परन्तु दोपहरके समय दोनोंमें एक होड़के कारण वैमनस्य पैदा हो गया। एक मोटे-ताज़े हिरणका दोनोंने एक साथ पीछा किया। हिरण खूब तेज़ीसे जानपर खेलकर चौकड़ियाँ भर रहा था। उसके पीछे-पीछे दोनों मित्र दो समानान्तर रेखाओंकी तरह साथ-साथ घोड़ा लिये हुए सरपट भागे चले जा रहे थे। सहसा एक ऊँची चट्टान सामने आ जानेके कारण हिरण रुककर खड़ा हो गया। वह बहुत ही भयभीत होकर अभी भली प्रकार इधर-उधर देख भी न पाया था कि रिचर्डने उसपर अपनी पिस्तौलसे फायर किया। भाग्यसे गोली चूककर चट्टानपर लगी। हिरण एक साथ जानपर खेलकर कूदा— अगले ही क्षण वह चट्टानकी चोटीपर जा पहुँचा। इसी समय दोनों मित्रोंने एक साथ इसपर दो फायर किये। फायरके अनन्तर दूसरी तरफ किसी चीज़के धम्मसे गिरनेकी आवाज़ भी आई। रिचर्ड और ब्रेक यह समझ गये कि उनका निशाना ठीक बैठा है। दोनों अपने घोड़ोंको वहीं बाँधकर चट्टानके ऊपर पहुँचे। दूसरी ओर झाँककर देखा तो हिरण वहीं मरा पड़ा था। उसे उठाकर घोड़ोंके नज़दीक ले आये। जाँच करनेपर मालूम हुआ कि हिरणको केवल एक गोली ही

लगी है। दोनों मित्रोंमेंसे किसी एकका निशाना अवश्य चूका है! इसी बातको लेकर दोनों दोस्तोंमें खूब तकरार हुई। ब्रेक कहता था—"अरे, तेरा निशाना तो उस समय भी चट्टानसे जा लगा था, जब कि हिरण बुतकी तरह निश्चल खड़ा था। बड़ा आया है निशानेबाज़!" रिचर्ड क्रोधमें भरकर—"सूअर! हाथीकी लाश! गैंडेका पेट!" आदि गालियाँ देनेपर तुला हुआ था। वास्तवमें किसकी गोलीसे हिरण मरा था—यह बात तो ईश्वर ही जाने, परन्तु पूरे चालीस-पचास मिनटके भयङ्कर वाग्युद्धके अनन्तर ब्रेककी विजय रही। अपने घोड़ेपर उसने वह मरा हुआ हिरण लाद लिया। तब दोनों दोस्त पहाड़की चोटीपर चढ़ने लगे। दस-पन्द्रह मिनटकी चढ़ाई पार करके ही ब्रेकने आराम करनेका प्रस्ताव पेश किया था।

ईस्टरके शुक्रवारका सारा मज़ा किरकिरा हो गया। इस सुन्दर पार्वत्य प्रदेशके मनोहारी दृश्य और फूलोंके सुगन्धसे भारी होकर बहती हुई ठण्डी हवा भी दोनों मित्रोंके मनोमालिन्यको न धो सकी।

कुछ देर तक इसी प्रकार पड़े रहनेके उपरान्त ब्रेकने अपनी शराबकी बोतल निकाली। उसे वह एक-एक घूँट करके धीरे-धीरे पीने लगा। क्रमशः शराबके हलके नशेने उसकी सब चिन्ताओंपर आवरण डाल दिया। वह मस्त होकर कोई असभ्य रागिणी गाने लगा। रिचर्ड इस समय भी अनमना-सा बैठा हुआ था। आज तक अपने साथियोंकी दृष्टिमें वह ब्रेककी अपेक्षा अधिक चुस्त और फुर्तीला गिना जाता था; सम्भवतः वह इसी कारण आजकी घटनासे विशेष उदास हो उठा था।

(३)

सहसा रिचर्ड उछलकर खड़ा हो गया। उसके उछलनेकी आवाज़ सुनकर शराबकी हलकी झोंकमें मस्त ब्रेकने भी उसके आँखोंके लक्ष्यकी

ओर देखा। उसे दिखाई दिया कि उनसे करीब ३०० गज़की ऊँचाईपर एक मोटी-ताज़ी हिरणी अपने बच्चेको दूध पिला रही है। हिरणी खूब हृष्ट-पुष्ट थी, डील-डौलमें वह ब्रेकके हिरणसे भी अधिक बड़ी थी। वह आनन्दपूर्वक पहाड़ीपरकी हरी-हरी घास चर रही थी। इन दोनों शिकारियोंपर उसकी नज़र नहीं पड़ी थी। ब्रेक नशेमें मस्त हो रहा था—उसने इस हिरणीको बड़ी उपेक्षासे देखा, परन्तु रिचर्डने बड़ी फुर्तीसे अपनी पिस्तौल भर ली। इसके बाद अपने कोटकी जेब-मेंसे शराबकी बोतल निकालकर वह एक साथ आधी बोतल चढ़ा गया। तीव्र शराबके ताज़े नशेमें आकर वह पूरे बलसे उस हिरणीकी ओर लपका। उसके लिये आजकी पराजयका यही प्रायश्चित्त था।

जंगलमें रहनेवाले हिरण हर समय इस आशंकासे चौकन्ने रहते हैं कि न मालूम कब उनकी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली कोई अन्य पशु उनपर आक्रमण कर दे; परन्तु आश्चर्य यह था कि रिचर्डने जिस हिरणीका पीछा किया, वह बिलकुल बेपरवाह होकर घास चर रही थी, मानो अवधका कोई ज़मीन्दार अपनी ज़मीनमें विचर रहा हो। रिचर्ड शीघ्र ही उस हिरणीके अत्यन्त निकट पहुँच गया। वह अपनी पिस्तौल सँभालकर हिरणीपर फायर करने ही वाला था कि अचानक घासपर उसका पैर फिसल गया। बड़ी कठिनाईसे वह नीचे गिरनेसे बचा। उसके फिसल पड़नेकी आवाज़ सुनकर हिरणी चौंक उठी। आँखें उठाते ही उसकी नज़र रिचर्डपर पड़ी—वह एक ही छलांगमें रिचर्डकी आँखोंसे ओझल हो गई। रिचर्ड सँभलकर उठ खड़ा हुआ। शराबके तेज नशेने उसपर हत्याके उत्साहका भूत सवार कर दिया था, वह भी पूरे साम-र्थ्यके साथ उसी ओर भागा।

• रिचर्डको कुछ आश्चर्य हो रहा था कि आखिर एक ही छलाँगमें हिरणी किधर गायब हो गई। उसे यह भी सन्देह था कि शायद वहीं कहीं छिप रही होगी। उस स्थानपर पहुँचकर उसे मालूम हुआ कि सचमुच हिरणी कहीं अधिक दूर नहीं गई, वह केवल पासकी एक दीवार फाँदकर उसकी ओटमें चली गई है। रिचर्डने कुछ विस्मयके साथ उस दीवारकी ओर देखा। यह दीवार किसी मकानकी चारदीवारी प्रतीत होती थी। क्या इस निर्जन और घने वनमें भी कोई मनुष्य निवास कर रहा है?

थोड़ी दूरपर ही दीवारका फाटक था। रिचर्ड समझ गया कि हिरणीका बच्चा इसी फाटकमेंसे होकर अपनी माताके पास चला गया है। फाटकके सामने आकर रिचर्डने अन्दरकी ओर झाँका। उसे दिखाई दिया कि शुभ्र बरफके समान सफेद बालोंवाला एक बूढ़ा व्यक्ति फव्वारा हाथमें लेकर आँगनके फूलोंको सींच रहा है। वह हिरणी उसीकी ओटमें छिपी हुई खड़ी है, पास ही उसका बच्चा खेल रहा है। बूढ़ा पोशाकसे हिन्दुस्तानी प्रतीत होता है।

रिचर्डपर हत्याका भूत सवार था, वह पिस्तौल हाथमें लिये हुए हिरणीकी ओर लपका। शराबके नशेमें उसे यह भी ध्यान न आया कि यह हिरणी उस वृद्धकी पालतू भी हो सकती है।

यह अचानक आक्रमण देखकर वृद्ध चौंक पड़ा। उसके लम्बे एकान्त जीवनमें इस प्रकारका आक्रमण शायद पहली घटना थी, परन्तु वह घबराया नहीं। अपने सधे हुए हाथोंसे ज़मीनपर रक्खी हुई पिस्तौल उठाते हुए उसने कहा—"खबरदार! एक भी कदम और मत बढ़ाओ।"

नशेकी अवस्थामें भी सामने बाधा उपस्थित हुई देखकर रिचर्ड रुककर खड़ा हो गया, परन्तु अपनी सुप्त चेतनामें वह उस

हिरणीपर प्रहार कर ही बैठा, उसकी गोलीसे हिरणीके बच्चेकी एक टाँग जख्मी हो गई। वृद्धके लिये यह उपद्रव असह्य था, अगले ही क्षण उसने अपने पाससे एक मज़बूत डण्डा उठाकर रिचर्डकी कलाईपर प्रहार किया। रिचर्डके हाथसे पिस्तौल दूर जा गिरी, उसका हाथ सख्त जख्मी हुआ, परन्तु वृद्ध महोदयको इतनेसे ही शान्ति नहीं हुई। उन्होंने डण्डेके प्रहारसे रिचर्डकी टाँगें भी जख्मी कर दीं, वह वहींपर गिर पड़ा। रिचर्डका नशा काफ़ूर हो गया। वह भयभीत होकर अपने साथीका नाम ले लेकर पुकारने लगा। नशेकी झोंक उतर जानेपर घायल रिचर्डको स्वयं आश्चर्य होने लगा कि वह इतना बलवान् और फुर्तीला होते हुए भी कब्रमें पैर लटकाए हुए इस वृद्धसे किस प्रकार पिट गया। रिचर्डको उसी हालतमें छोड़कर वृद्ध महोदय अपने ज़ख्मी जानवरकी चिकित्सामें तत्पर हो गये। रिचर्डका पिस्तौल उन्होंने ज़ब्त कर लिया।

अपने मित्रकी पुकार सुन ब्रेक थोड़ी ही देरमें वहाँ पहुँच गया। रिचर्डको ज़ख्मी देखकर उसके आश्चर्यका ठिकाना न रहा, परन्तु अपने मित्रके वहाँ पहुँचते ही रिचर्डकी स्वाभाविक सैनिक प्रवृत्ति जागृत हो गई। अपने मित्रको यह सुनाते हुए कि इस बूढ़ेने मुझे इस तरह घायल किया है—उसे लज्जा प्रतीत होने लगी। उसने अपने घायल होनेकी एक कल्पित कहानी ब्रेकको कह सुनाई। उसने कहा—"इस हिन्दुस्तानी बूढ़ेके पास तीन हबशी नौकर हैं। जब मैं उस हिरणके पीछे-पीछे पहुँचा, तो तीनों हबशी मुझपर डण्डे लेकर टूट पड़े। यद्यपि मैं इस आक्रमणके लिये तय्यार नहीं था, फिर भी मैंने खूब बहादुरीसे उनका सामना किया। एक हबशी तो मेरी चोटोंसे बेहोश भी हो गया था, परन्तु शेष दोनोंने मिलकर मुझे ज़ख्मी कर दिया, उन्हें स्वयं भी चोटें

आई हैं।" रिचर्डकी कल्पित कहानी सुनकर ब्रेकका खून उबल पड़ा। वह भी उन हबशियोंसे मोरचा लेनेके लिये व्याकुल हो उठा, परन्तु घायल रिचर्डने ही उसे इस तरह आक्रमण करनेसे रोका। वह बूढ़ेकी हिम्मत और अधिक नहीं परखना चाहता था।

ब्रेक और रिचर्ड दोनों बाहर चले आये।

(४)

रिचर्डका इज़हार समाप्त हो जानेके अनन्तर न्यायाधीशने उस वृद्ध भारतीय अभियुक्तका बयान लेना शुरू किया। न्यायाधीशने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

वृद्धने उत्तर दिया—"वीरसिंह।"

न्यायाधीशने पिताका नाम, जाति, आयु आदिके सम्बन्धमें अनेक तरहसे प्रश्न किये, परन्तु अभियुक्तने इस सम्बन्धमें कुछ भी बतानेसे स्पष्ट इंकार कर दिया।

न्यायाधीश महोदय इसपर भी वृद्धसे नाराज़ नहीं हुए। वृद्ध भारतीय इतना अधिक बूढ़ा था कि उसके शरीरका एक-एक रोम श्वेत पड़ चुका था। उसे देखकर न्यायाधीशने यही समझा कि यह व्यक्ति अत्यधिक बुढ़ापेके कारण अपने पिताका नाम, आयु आदि सभी कुछ भूल गया है। मजिस्ट्रेटने अपने क्लार्कसे कहा—"लिख लो—आयु लगभग ६० बरस, जाति हिन्दू, पिताका नाम स्मरण नहीं।"

वृद्ध महोदयने इसपर कोई एतराज़ नहीं किया।

न्यायाधीशने फिर पूछा—"आपके वे तीनों नौकर यहाँ उपस्थित क्यों नहीं हुए?"

बूढ़े हिन्दूस्तानीने मुस्कराकर पूछा—"कौनसे नौकर?"

मजिस्ट्रेटने गम्भीर होकर कहा—"कौनसे क्या? वही जिन्होंने इस व्यक्तिको घायल किया है।"

वृद्ध वीरसिंहने हँसकर उत्तर दिया—"इसे स्वयं मैंने ही ज़ख्मी किया था। मेरे पास कोई नौकर नहीं है।"

न्यायाधीशने समझा कि बूढ़ेका दिमाग़ बिगड़ गया है। उन्होंने जिरह करनी शुरू की—"तुम्हारे यहाँ कितने प्राणी रहते हैं?"

"तेरह।"

"उनके नाम क्या-क्या हैं?"

"मेरा नाम वीरसिंह है। बाकियोंके नाम हैं—रजनी, चपला, दामिनी,—"

मजिस्ट्रेटने रोककर पूछा—"उँह! उनमें कितने पुरुष, कितनी स्त्रियाँ और कितने बच्चे हैं?"

वीरसिंहने कहा—"दो नर, छः मादा और चार बच्चे मेरे साथ रहते हैं!"

"ये दो नर कौन हैं?"

"चञ्चल और जयन्त।"

"इनकी जात क्या है?"

"हिरण।"

इस बार मजिस्ट्रेट महोदय सचमुच नाराज़ हो गये। उन्होंने गम्भीर होकर कहा—"अदालतसे मज़ाक करते हो?"

वीरसिंहने नम्रतासे उत्तर दिया—"मैं तो आपके प्रश्नोंका उत्तर दे रहा हूँ।"

न्यायाधीशने कहा—"फिर इतना समय क्यों खराब कर रहे हो ?"

वृद्धने उत्तर दिया—"मैंने आपसे पहले ही कहा था कि मेरे पास कोई नौकर नहीं। मैं अकेला ही रहता हूँ।"

मजिस्ट्रेटने खीजकर पूछा—"तो फिर रिचर्डको घायल किसने किया।"

"मैंने।"

"तुमने ?" मजिस्ट्रेटको कुछ सूझ न पड़ा कि वह इसके बाद क्या प्रश्न पूछे। इसी समय अभियोगीके वकीलने उन्हें सलाह दी कि वह अभियुक्तसे इस अपराधके कारणके सम्बन्धमें प्रश्न करें। मजिस्ट्रेटको भी यही उचित प्रतीत हुआ। उसने पूछा—"अच्छा यदि मान भी लिया जाय कि तुम्हींने अकेले रिचर्डको पीटा (इसपर हँसी हुई), तो इसका कारण क्या था ?"

वीरसिंह सहसा बहुत गम्भीर बन गया। उसने स्थिर आवाज़में कहा—"यदि तुम्हें मेरी बातपर विश्वास न हो, तो मैं फिरसे इसे पीट-कर अपनी ताक़तका परिचय दे सकता हूँ।"

रिचर्ड डर गया। उसने ज़रा पीछे हटकर कहा—"बापरे बाप ! बूढ़ा क्या है, हिमालयकी चढ़ाई है !"

अदालतने आश्चर्यसे पूछा—"अच्छा तो तुमने इसे मारा क्यों ?"

वीरसिंहने कहा—"यदि मुझमें कुछ अधिक सामर्थ्य होता, तो मैं इसे और भी अधिक पीटता। इसने मेरे 'अजय' की टाँग तोड़ डाली है।"

"अजय कौन है ?"

"रजनीका बच्चा।"

"रजनी कौन है ?"

"मेरी हिरणी।"

इसपर फिर कहकहा पड़ा, परन्तु वीरसिंह बहुत गम्भीर भावसे ये सब बातें कह रहा था। इतनी सफाई देनेके अनन्तर उसने अदालतके एक भी प्रश्नका उत्तर नहीं दिया।

कानूनके अनुसार मामलेपर पूरी तरह विचार किये जानेके उपरान्त अदालतने वृद्ध वीरसिंहको अपराधी पाया। उसे ६ मासकी सादी सज़ा दी गई और उसके कल्पित नौकरोंके नामपर बिला जमानती वारण्ट जारी कर दिये गये!

(५)

परन्तु मनुष्य-निर्मित जेलकी दीवारें निरपराध वीरसिंहको एक दिनके लिये भी अपने अन्दर कैद न रख सकीं। जेल-यात्राके पहले दिन ही सायंकालके समय उस वीरका स्वर्गवास हो गया। बूढ़ेकी लाशके नीचेसे, तलाशी लेनेपर, एक चिट्ठी बरामद हुई। यह चिट्ठी हम यहाँ ज्यों-की-त्यों उद्धृत कर रहे हैं—

"मचाकोस नगरके निवासियोंके नाम—

पुत्रो!

इस जगह, कोठरीमें बन्द होकर रहना मैं कभी सहन न कर सकूँगा। लगातार ४० बरसों तक मैं इन्हीं पहाड़ोंपर—आस्मानकी बिजलीकी तरह, भागते हुए झरनोंकी तरह और समुद्रकी तरङ्गोंकी तरह बिलकुल आज़ादीसे घूमा-फिरा हूँ; आज भी आज़ाद ही रहूँगा। तुम लोगोंने बिजलीको वशमें कर लिया है, झरनोंको बाँध दिया है और सुनता हूँ समुद्रकी तरङ्गोंको भी जीत लिया है; परन्तु तुम मुझे न बाँध सकोगे। यह स्थान आज मेरे लिये नया नहीं है। आजसे ४० बरस पूर्व मैं सैकड़ों बार इसी स्थानपर निश्चल होकर बैठा हूँ। आज जहाँ यह कारा-

वास बना है, उस समय वहाँ स्वच्छ जलका एक सुन्दर झरना झरा करता था। ठीक इसी कोठरीकी जगह, झरनेके बीचों बीच पत्थरकी एक बड़ी शिला पड़ी हुई थी। इस शिलापर निरन्तर घण्टों तक बैठकर मैं झरनेके असंयत पानीसे स्वाधीनता, चञ्चलता और प्रसन्नताके स्वर्गीय पाठ पढ़ा करता था। पुत्रो, भाग्यके फेरसे आज उसी चट्टानको काटकर बनाई गई इस कोठरीमें तुम मुझे 'कैद' करना चाहते हो! यह न होगा, कदापि न होगा।

"मैं आज तक तुम लोगोंके लिये अज्ञात था। तुम मेरी देवताके समान प्रतिष्ठा करते थे। मुझे मालूम है, मेरे ही कल्पित दैवी स्वरूपके सम्बन्धमें तुम्हारे कवियोंने अनेक सुन्दरतम काव्योंकी सृष्टि की है, सैकड़ों बार इस नगरमें रहनेवाली कोमलाङ्गी युवतियोंने, मेरी ही पुत्रियोंने, मेरे सम्बन्धके गीत तुम्हारे सामाजिक उत्सवों और भोजोंमें गाये हैं। मैं ही तुम्हारा वह 'नगरका पिता' हूँ, जिसकी कल्पित मूर्तिके सम्मुख तुम सब लोग आदरसे सिर झुकाकर खड़े होते हो।

"इस सुन्दर नगरके निवासियो, आज तक मैं तुम्हारी कल्पनाका एक अज्ञात देव था। तुम्हारी दृष्टिमें मैं जाति, वर्ण, वंश, कुल आदिकी सम्पूर्ण वाधाओंसे बहुत ऊपर था। तुम मुझे 'वतनका देवता' कहकर याद करते थे, परन्तु मेरे तो वर्ण, वंश, जाति आदि सभी कुछ था। पुत्रो, यदि आज तुम्हें यह मालूम हो जाय कि तुम्हारी कल्पनाका वह फरिश्ता एक 'भारतीय' था, तो बताओ, तुममेंसे कितने लोगोंके हृदयमें उसके लिये वही सम्मानका भाव शेष रहेगा?

"४० वर्ष पूर्व जब यह सुन्दर घाटी एक घने जंगलसे ढकी हुई थी, मैं सचमुच उस वनका राजा था। मेरा यह राज्य भी ठीक ४० बरसों तक ही कायम रहा है। उन दिनों मैं जवान था; तब मेरी बाहुओंमें

बल था, शरीरमें स्फूर्ति थी। प्रतिदिन मैं मीलों तक दौड़ता था, मनों बोझ उठाता था और अनेक आपत्तियोंका सामना करता था। मैं शिकारी जानवरोंका आखेट किया करता था—बीसियों बड़े बड़े शेर मेरे हाथोंसे मारे जा चुके हैं। जब किसी पहाड़की चोटीपर खड़े होकर मैं पूरे बलके साथ अपनी तुरही बजाता था, तो ये सम्पूर्ण सुनसान घाटियाँ उसकी गम्भीर प्रतिध्वनिसे गूँज उठती थीं। ओह, वे घड़ियाँ कितना मस्त बना देनेवाली होती थीं! तुरहीकी गूँजसे मीलों तक स्मशानके समान सन्नाटा छा जाता था; वनके सम्पूर्ण पशु अपने सम्राट्का आदेश पाकर अपनी-अपनी खोहोंमें छिप जाते थे। तब मैं वनके अकृत्रिम फूलोंसे अपना शृङ्गार करता था—अपने धनुषको भी फूलोंसे सजाता था। इसके बाद?—इसके बाद झरनेके किसी शान्त भागमें जाकर निश्चल जलमें मैं स्वयं अपना प्रतिबिम्ब देखा करता था।

"उफ़, अब वह जमाना याद करके क्या होगा! मेरे स्वच्छन्द, निरंकुश राज्यके वे ४० बरस, ४० दिनोंके समान बीत गये। इन ४० बरसोंके बाद सर मोरिफ़ महोदयने शेरकी दाढ़ोंसे मुक्ति पाकर इस घाटीमें इस नगरकी स्थापना की। यह भी सम्भवतः ईश्वरकी प्रेरणा ही थी। भाग्य-चक्रसे मेरे जीवनके यौवनका मध्याह्न काल उस शेरकी हत्याके साथ ही समाप्त हो गया!

"धीरे-धीरे यहाँ यह सुन्दर नगर बस गया, और मैं चंचलता छोड़कर एकान्त वास करने लगा। पिछले ४० बरस मैंने इन जंगली हिरणोंके साथ ही बिताये हैं। उस समय मैंने जिन हिरणोंको पाला था, आज उनकी पाँचवीं पीढ़ियाँ मेरे आश्रममें दो-दो बच्चोंकी माताएँ बनी हुई हैं।

"पिछले ४० बरसोंमें मैं अज्ञातरूपसे अनेक बार अपने इस अपहृत राज्यका निरीक्षण करनेके उद्देश्यसे यहाँ आता रहा हूँ। तबमें और अबमें

बड़ा परिवर्तन आ गया है। आज जहाँ तुम्हारा चर्च बना हुआ है—वहाँ उस समय एक शेरनीकी माँद थी; तुम्हारे न्यायालयके स्थानपर ही मैंने एक बहुत बड़े बब्बर शेरका शिकार किया था। तुम्हारे स्कूलके आँगनमें देवदारका जो विशाल वृक्ष है, उसे मैंने अपनी किसी जन्म-गाँठके उपलक्ष्यमें ही वहाँ लगाया था। आज जिस स्थानपर 'पार्कर कम्पनी'की आलीशान इमारत है, वहाँ उस ज़मानेमें एक गहरा गड्ढा था, जिसमें गरमियोंकी मौसममें हाथी आराम किया करते थे।

"परन्तु अब तो उन मधुर स्मृतियोंको भुला देनेमें ही कल्याण है। अच्छा पुत्रो! मैंने सब भुला दिया! तुम लोग फलो और फूलो, मुझ सौ बरसके बूढ़े हिन्दोस्तानी राजपूतका यही हार्दिक आशीर्वाद है।

वीरसिंह।"

बूढ़े वीरसिंहकी यह चिट्ठी सिटी-मजिस्ट्रेटके पास पहुँची तो अवश्य, परन्तु मालूम नहीं कि उन्होंने इस चिट्ठीके साथ क्या सलूक किया। पहाड़की चोटीपर वह सफेद संगमरमरकी मूर्ति आज भी उसी शानसे खड़ी हुई है, परन्तु बूढ़े वीरसिंहको कोई नहीं जानता।

रूपको देख कर मुग्ध हो गया। बड़े आनन्दसे, कुछ क्षणों तक, उस हँस-रहे बालकको देखनेके उपरान्त उसने अपनी आँखें नीचे कर लीं।

गुलशनके हाथमें एक बड़ासा कागज़ था। इस कागज़पर स्याहीसे कुछ रेखाएँ पड़ी हुई थीं। जिन दिनोंकी बात हम कर रहे हैं उन दिनों एक बड़े आकारका कागज़ कोई मामूली चीज़ नहीं था। प्रतीत होता है कि इस कागज़को गुलशन ज़बरदस्ती अपने पितासे छीन लाया था। इस कागज़पर किसी नई इमारतका नक्शा बनाया जा रहा था। पितासे हाथ छुड़ा कर, यह कागज़ लिये हुए वह इतनी दूर भाग आनेमें सफल हुआ था, सम्भवतः उसकी इस बेहद खुशीका यही कारण था। हाशिमको घबराया हुआ देखकर बालक हाशिम और भी अधिक उच्च स्वरसे हँस पड़ा। उसने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

बूढ़े गुलामने बड़ी संजीदगीसे कहा—"हाशिम।"

गुलशनने कहा—"अच्छा, काका हाशिम! मुझे इस कागज़की एक नाव बना दो।"

'काका'का सम्बोधन सुनकर हाशिम गद्गद हो गया। उसने गुलशनके हाथसे वह कागज़ ले लिया। हाशिमके हाथोंमें हुनर था। उसने शीशमकी सूखी लकड़ियाँ जमा करके उन्हें अपने बसूलेसे छील छालकर बराबर कर लिया। अपने कुरतेका एक भाग फाड़कर उसने कई रस्सियाँ तैयार कीं। हाशिमको अपने कपड़े फाड़ते हुए देखकर अबोध बालकने बड़ी सहानुभूतिसे कहा—"हुश, यह क्या करते हो। फिर पहनोगे क्या?"

असीम प्रसन्नतासे हाशिमको रोमांच हो आया। उसने कोई जवाब नहीं दिया। वह केवल और भी अधिक मनोयोगसे बालककी नाव बनाने

लगा। २०–२५ मिनटोंमें उसने नावका खोल तैयार करके उसे काग-ज़से मढ़कर बाक़ायदा एक छोटासा जहाज़ तैयार कर दिया। उसमें मस्तूल और पाल भी लगा दिये। नौका तैयार करके उसने बालकसे कहा—"यह लो!"

बालक बड़ा प्रसन्न हो गया। उसने बड़े प्रेमसे कहा—"काका हाशिम! यह तो बहुत अच्छी नाव है। आओ, इसे मिल कर तैरावें।"

हाशिमकी आँखोंमें आनन्दके आँसू छलक आये। उसने मन-ही-मन इस छोटे बालकके सुखी-जीवनके लिये खुदासे दुआ माँगी।

(२)

हाशिम जब अपने खेतके निकट पहुँचा तब उसके होश गुम हो गए। उसने देखा कि उसके खेतके सम्मुख एक हब्शी जमादार एक बड़ासा बेंत हाथमें लिये घूम रहा है। सब गुलाम चुपचाप अपनी अपनी क्यारियोंमें अंगूर जमा कर रहे हैं। रोज़की तरह न कोई गा रहा है और न आपसमें बातचीत ही कर रहा है। हाशिम समझ गया कि बैरा-मीटरके पारेका इस प्रकार सहसा नीचे गिर जाना निकट भविष्यके किस तूफ़ानका द्योतक है। एक गुलाम होकर पूरे दोपहरतक अपनी जगहसे गायब रहना कोई हँसी ठट्ठा नहीं है, यह बात हाशिम भली प्रकार जानता था। वह आज अपने कामपर पूरे चार घण्टे लेट पहुँचा था!

हाशिम डरते डरते अभी अपनी क्यारियोंके निकट पहुँचा ही था कि हब्शी जमादारने गरजकर पूछा—"इतनी देरतक कहाँ था?"

हाशिमने काँपते हुए स्वरमें बहाना किया—"पेटमें दर्द हो गया था। चलते चलते राहमें गिर पड़ा था।"

जमादारने यह जाँच करनेकी आवश्यकता नहीं समझी कि हाशिम सच कह रहा है या झूठ। उन दिनोंका यह एक सर्वमान्य सिद्धान्त था कि गुलाम कभी सच नहीं बोलते। जमादारने तड़ातड़ ५—७ बेंत हाशिमकी पीठपर जड़ दिये। यदि वह कोशिश करता तो शायद अपने मालिकके पुत्रका नाम लेकर इस यन्त्रणासे छुटकारा पा लेता, परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। बेंतोंकी मारसे हाशिम ज़मीनपर गिर गया था, वह धीरे धीरे अपनी सूजी हुई पीठको झाड़ पोंछकर उठ खड़ा हुआ। हब्शी जमादार उसकी ओर बड़ी क्रोधपूर्ण नज़रसे देखता हुआ किसी दूसरी तरफ़ चला गया।

हाशिम जानता था कि इस घटनाका यहीं अन्त नहीं हो गया। उसे मालूम था कि यदि आज वह अपना दिनभरके लिये निर्दिष्ट काम समाप्त नहीं कर पायेगा तो शामके समय उसकी पीठका चमड़ा बेंतोंकी मारसे उधेड़ दिया जायगा। इस लिये वह अपने काममें जुट गया। आज वह शैतानकी हालतसे अपना काम कर रहा था। उसके साथी हैरान थे कि इस बूढ़ेमें इतनी ताकत कहाँसे आ गई।

सायंकालको ज़मीन्दार आफ़ताबखानके सहनमें सब गुलाम अपनी दिनभरकी मेहनतका परिणाम लेकर जमा हुए। हाशिमका उस दिनका काम सन्तोषजनक पाया गया। बूढ़े हाशिमको अबतक चिन्ताकी गर्मी क्रियाशील बनाये हुए थी, अब उस चिन्तासे मुक्त होकर वह भारी थकान अनुभव करने लगा। हाशिम अपनी टोकरी लेकर तराजूके पास ही बैठ गया। प्रातःकालका फाड़ा हुआ कुरता अब भी उसके गलेमें लटक रहा था। उसकी पीठ कोड़ोंकी मारसे सूजी हुई थी। मुँह और दाढ़ीके सफ़ेद बालोंपर मिट्टी जमी हुई थी। थकावटके मारे हाशिमका बुरा हाल था।

इसी समय अपनी प्रातःकालवाली नौका हाथमें लिये हुए बालक गुलशन इस जगह आ पहुँचा। हाशिमको दूरसे देखते ही वह उसकी ओर भागा। हाशिमकी सम्पूर्ण उदासी और थकावट दूर हो गई, वह इस सुन्दर बालककी तरफ़ देखकर मुस्कराने लगा।

गुलशन इस समय तक निकट आगया था। वह मुहारनी रटने लगा—"हाशिम, हाशिम, बूढ़ा हाशिम, काका हाशिम!"

अचानक बालककी नज़र हाशिमकी पीठपर पड़ी। उसकी सूजी हुई पीठको देख कर बालकने गम्भीर होकर पूछा—"यह क्या हुआ? काका हाशिम!"

जन्मका अभागा गुलाम, बूढ़ा हाशिम इस वार सचमुच झूठ बोला। उसने कहा—"पेड़से गिर गया था। मामूलीसी चोट आ गई है।"

(३)

बच्चोंके दिमाग़में कोई बात अधिक देर तक नहीं रहती, और यही बचपनकी सबसे बड़ी सिफ़त है। उनके दिलमें न किसीसे स्थिर द्वेष होता है और न किसीसे प्रेम। अबोध होते हुए भी वे किसी मनुष्यको देख कर यह भाँप लेते हैं कि वह उनसे स्नेह करता है या घृणा। साथ ही उस मनुष्यके आँखोंसे ओझल होते ही वे यह भी भूल जाते हैं कि वह उनसे प्यार करता था या नफ़रत। गुलशन भी हाशिमकी यादको बहुत शीघ्र भूल गया। उस दिनके बाद वह बहुत दिनों तक हाशिमको दिखाई तक भी न दिया। फिर भी लोगोंमें यह बात बड़े ज़ोरसे फैल गई कि हाशिम अपने स्वामिपुत्रका मुँहलगा है। लोगोंको विश्वास हो गया कि अब शीघ्र ही हाशिमकी तूती बोलने लगेगी। इस कारण जहाँ बहुतसे लोग उससे दबने लगे, वहाँ उससे खार खानेवाले लोगोंकी

संख्या भी बढ़ गई। यहाँ तककी हाशिमको स्वयं भी इस बातका कुछ कुछ भ्रम हो गया कि उससे गुलशनका विशेष सम्बन्ध है।

दिन भरका काम-काज समाप्त करके हाशिम अपने मकानके सामने यों ही धीरे धीरे टहल रहा था कि उसकी दृष्टि दूरपर खड़े होकर पतङ्ग उड़ाते हुए गुलशनपर पड़ी। आज उसे बहुत दिनोंके बाद वह तेजस्वी बालक दिखाई दिया था। हाशिम बड़ी शीघ्रतासे चल कर उसके निकट पहुँचा। गुलशन अब भी तन्मय होकर अपनी पतङ्ग उड़ा रहा था। हाशिमके भाग कर अपनी तरफ़ आनेके कारण उसका ध्यान पलभरके लिये उसकी तरफ़ गया तो सही, परन्तु बिना किसी विशेष भावके प्रदर्शित किये वह फिरसे अपनी पतङ्ग उड़ानेमें लग गया।

हाशिमका ख्याल था कि गुलशन अब भी मुझे पहिचानता है। अतः वह उसकी तरफ़ देखकर मुस्कराया। परन्तु यह उसका भ्रम था। छोटे बालकको उस दिनकी नाव बनानेवाली घटना विस्मृत हो चुकी थी। वह हाशिमको नहीं पहिचान पाया।

बालकका यह उपेक्षाका व्यवहार देखकर हाशिमको कुछ दुख तो हुआ, परन्तु वह वहाँसे टला नहीं। स्थिर रूपसे खड़े हो कर वह उस सुन्दर बालककी चञ्चलताका निष्पाप मज़ा लूटने लगा।

बालक बड़े प्रयत्नसे पतङ्ग उड़ा रहा था। उसकी नज़रमें उसकी पतङ्ग आस्मानकी छतसे टकरा रही थी। परन्तु हाशिम देख रहा था कि बेचारा बालक अभी तक भली प्रकार पतङ्ग उड़ाना नहीं जानता है। उसका दिल इस कार्यमें गुलशनकी सहायता करनेके लिये उत्सुक था, परन्तु गुलशनका आजका व्यवहार देख कर उसकी यह हिम्मत न हुई कि वह बालकके हाथसे पतङ्ग लेकर उसे और अधिक ऊँचा उड़ा सके।

अचानक बालक गुलशन प्रसन्नतामें भरकर हाशिमकी ओर देखते हुए चिल्ला उठा—" अहा ! मेरी पतङ्ग ! " शायद उसकी पतङ्ग इस वार २—३ फीट और ऊँचाईपर पहुँच गई थी ।

हाशिमने साहस करके बालकके बिना कहे ही उसके हाथसे पतङ्ग ले ली । माऌम होता है कि बालकको हाशिमका यह व्यवहार अच्छा नहीं माऌम हुआ । फिर भी उसने इस बातका विरोध नहीं किया ।

हाशिमके हाथ काँप रहे थे । उसने अपनी पूरी ताकतसे झटके दे-देकर पतङ्गको ऊँचा चढ़ाना शुरू किया । दो तीन झटकोंमें ही पतङ्ग दुगुनी ऊँचाईपर चली गई । बालक गुलशनका गम्भीर चेहरा अब प्रसन्नतासे खिल उठा । वह नाच-नाचकर ताली बजाने लगा ।

परन्तु हाशिमकी किस्मत खराब थी । अगले ही झटकेमें वह अभागा पतङ्गका तागा तोड़ बैठा ! तूफ़ानमें बेपतवार नावके समान पतङ्ग उच्छृङ्खल होकर आकाशके किसी मार्गमें स्वच्छन्दतापूर्वक चल दी । बालक गुलशन एक क्षण तक निष्प्रभसा खड़ा रहा । अगले क्षण वह चिल्लाता हुआ पतङ्गकी ओर भागा । बालककी नजर ऊपरकी ओर थी । थोड़ी ही दूरपर एक पत्थरसे ठोकर खाकर सम्पूर्ण चिराग़ घाटीके मालिकका वह लाड़ला पुत्र ज़मीनपर गिर पड़ा । पतङ्ग छिन जानेके मानसिक कष्टके बाद यह शारीरिक व्यथा । बालक चिल्ला चिल्लाकर रोने लगा । उसकी टाँगपर चोट आगई थी । कपड़े मिट्टीसे भर गए थे ।

हाशिमको काटो तो तो उसमें खून नहीं । वह अचानक यह कैसा कल्पनातीत उत्पात कर बैठा । उससे हिला-डुला तक भी न गया ।

इसी समय उसकी पीठपर दो चार गालियोंके विशेषणके साथ चमड़ेका एक कोड़ा पड़ा । बूढ़ा गुलाम जमीनपर गिर पड़ा । खुद मालिक

ही गुस्सेमें भर कर उसपर कोड़ोंकी बौछार कर रहा था । हाशिम सिसक सिसक कर रोने लगा । सच पूछो तो उसे कोड़ोंकी मार नहीं रुला रही थी, वह रो रहा था अपनी फूटी किस्मतके उलटे दाँवपर । ज़मीन्दार आफ़ताबखानके अनेक गुलाम हाशिमके हाथ पैर बाँधकर उसे जेलखानेमें ले गए ।

(४)

यह घटना जिस रूपमें आफ़ताबखानके सम्मुख रक्खी गई, उसे सुनकर ज़मीन्दारके जीमें आया कि हाशिमको जीते जी ज़मीनमें गाढ़ दूँ । उस ज़मानेका कोई भी कानून या कोई भी मज़हब उसकी इस इच्छाके मार्गमें बाधक बन कर खड़ा होनेको तैयार नहीं था, फिर भी न जाने क्या सोचकर उसने यह मामला कुछ समयके लिये टाल दिया । हाशिमके साथ रहनेवाले और उससे ख़ार खाये हुए गुलामोंने ज़मीन्दा-रको सुनाया था—" हजूर ! आक़ा गुलशन मैदानमें अपनी पतङ्ग उड़ा रहे थे । उन्हें अकेला पाकर यह हरामखोर उनके पास गया और सन्नाटा देखकर इसने उनकी पतङ्ग तोड़ डाली और उन्हें धक्का देकर ज़मीनपर गिरा दिया । यह वहाँसे भागना ही चाहता था कि हम लोगोंने इसे पकड़ लिया । "

दूसरे दिन आफ़ताबखानने अपने बच्चेको बुलाकर प्यारसे पूछा— " क्यों गुल ! कल उस गुलामने तुझे धक्का दिया था ? "

गुलशनने सिर हिलाते हिलाते कहा—" मुझे थोड़ा ही दिया था । तुम्हें दिया था । "

पिताने पुत्रके कोमल बालोंमें उँगलियाँ चलाते हुए पूछा—" तुम्हारी पतङ्ग उसने तोड़ी थी ? "

गुलके साथमें उस समय भी एक पतङ्ग थी। उसने उसे दिखा कर कहा—" नहीं अब्बा! मेरी पतङ्ग तो यह है।"

कलकी चोटसे गुलशनकी टाँगका एक भाग पीला पड़ गया था; आफ़ताबखानने उसे दिखाते हुए कहा—" तो फिर तुम्हें यह क्या हो गया है?"

आफ़ताबखानकी कलाईपर फारसीके नील अक्षरोंमें उसका नाम खुदा हुआ था। गुलशनने पिताकी कलाई पकड़कर पूछा—" तो फिर तुम्हें यह क्या हो गया है?"

इस बार मुस्कराकर पिताने पुत्रको छातीसे लगा लिया। उसे विश्वास हो गया कि इस अहमक लड़केसे कोई बात निकलवाना आसान काम नहीं है। इससे कलकी सची घटना किसी भी प्रकार ज्ञात न हो सकेगी। बालक गुलशनको यह क्या मालूम था कि जिन प्रश्नोंको वह इस प्रकार हँसीमें टाल रहा है, उन्हींके उत्तरपर अभागे हाशिमका जीवन आश्रित है। असलमें बालकके अन्तस्तलपर कलकी घटनाका कोई चिह्न तक भी अवशिष्ट न रहा था।

भूमिपति आफ़ताबखानने एक मटियाला कागज़ उठा कर उसपर बेपरवाहीसे लिख दिया—" आगामी जुमारातको मेरी मौजूदगीमें हाशिमकी नंगी पीठपर एक सौ कोड़े लगाये जायँ।"

(५)

निर्धारित मृत्युसे केवल कुछ घण्टे पूर्व ही हाशिमको इस बार फिर उस बाल-मूर्तिके दर्शन हुए। आज शायद उसके जीवनका अन्तिम दिन था। नंगी पीठपर १०० कोड़ोंकी मार कोई मखौलकी सज़ा नहीं है। इससे पूर्व कई बार हाशिम अपनी आँखोंसे देख चुका था कि ज़मींदारके हबशी

जमादार किस बेरहमीसे दण्डित गुलामोंपर कोड़े फटकारते हैं। ५—७ कोड़ोंकी मारसे ही आदमीकी पीठका मांस चीथड़े चीथड़े होकर उड़ने लगता है। और उसके बाद ? हाशिम उसके बाद कुछ सोच न सका। केवल दो एक घण्टेकी समाप्ति पर ही वह स्वयं प्रत्यक्ष कर लेगा कि उसके बाद क्या होता है।

हाशिम सिर झुकाकर यही बातें सोच रहा था कि चञ्चल गुलशन उसके द्वारके सींकचोंके पास आकर खड़ा होगया। हाशिमके चिन्तित और उदास चेहरेको देख कर बालकका ध्यान स्वयं उसकी तरफ़ आकृष्ट हो गया। आहट सुन कर हाशिमने जो सिर उठाया तो उसकी नज़र गुलशनपर पड़ी। आज गुलशनको देखकर सबसे पहले उसके दिलमें यही भाव आया—"वही है यह चपल बालक, जिसकी एक चीखके कारण आज थोड़ी ही देरमें बड़ी निर्दयतासे मेरे प्राण ले लिये जायँगे।"

हाशिम, अभागा और बूढ़ा हाशिम बच्चोंकी तरहसे फुफकार कर रो उठा।

हाशिमको रोता हुआ देखकर शायद बालकका दिल भी मसोस उठा। उसने बड़ी सहानुभूतिकी स्वरमें पूछा—"क्यों, रोते क्यों हो ? क्या भूख लगी है ?"

हाशिमने कोई जवाब नहीं दिया, केवल उसके रोनेका वेग और भी अधिक बढ़ गया। गुलशनके जेबमें पिस्ते भरे हुए थे। एक मुट्ठी पिस्ते हाशिमके सामने डाल कर बिजलीके समान चञ्चल वह बालक वहाँसे भाग गया।

इसके थोड़ी ही देर बाद यमके दूतके समान भयंकर एक हब्शीने हाशिमकी कोठरीका दरवाज़ा खोल कर कहा—"चलो, वक्त हो गया।"

गुलशनके फेंके हुए पिस्ते कोठरीके सीकचोंके पास अब भी उसी तरह बिखरे हुए पड़े थे।

(६)

उन दिनों गुलामोंको इस तरहकी बड़ी बड़ी सज़ाएँ देनेका काम बड़े समारोहके साथ किया जाता था—जैसे यह भी कोई त्योहार हो। समझा जाता था कि इससे अन्य गुलामोंके हृदयोंपर बड़े उत्तम मनोवैज्ञानिक संस्कार पड़ते हैं। आज भी आफ़ताबखानके सम्पूर्ण गुलाम कोड़े लगानेकी टिकटीको घेर कर कतारोंमें खड़े किये गए थे। टिकटीसे कुछ दूरीपर, गुलामोंकी कतारोंके बीचमें, एक ऊँचा चबूतरा था। इस चबूतरेपर कालीन बिछाकर एक शाही ढंगकी कुर्सी रक्खी गई थी। इसपर भूमिपति आफ़ताबखान बड़े रोबके साथ बैठा था।

हाशिमको नंगा करके टिकटीसे बाँध दिया गया था। पास ही मिट्टीके एक बड़े बर्त्तनमें, तेलमें भीगे हुए बेंत रक्खे थे। एक हट्टा कट्टा हबशी इन बेतोंकी जाँच पड़ताल कर रहा था। सहसा ज़मीन्दारका हुक्म हुआ—"होशियार!"

हबशी जमादारने कोड़ा सँभाल लिया; और बूढ़ा हाशिम आँखोंमें आँसू भर कर खुदाकी इबादत करने लगा।

ज़मीन्दार अगली आज्ञा देने ही वाला था कि बालक गुलशन कहींसे भागा हुआ वहाँ आ पहुँचा। वह सीधा अपने पिताके पास चला आया। बालककी ओर ध्यान बट जानेके कारण आफ़ताबखानको अगला फरमान देनेमें कुछ विलम्ब हो गया। कोड़ोंका जमादार अभी तक अपना कोड़ा आस्मानमें ऊँचा किये खड़ा था।

खुदासे इबादत करते हुए भी हाशिमकी दृष्टि इस चञ्चल बालकपर पड़ ही गई। उस बेचारेकी आँखोंसे दो बूँद आँसू, उसके सूखे हुए

कपोलोंको भिगोते हुए नीचेकी ओर खिसक गए। हाशिमके हाथ पीछेकी ओर बँधे हुए थे, अतः वह उन्हें पोंछ नहीं सका। ठीक इसी समय बालक गुलशनकी नज़र इस बूढ़े गुलामपर पड़ी। बालक सहसा मचल पड़ा—" इस आदमीको क्यों बाँधा है ? इसे छोड़ दो। ऊँ ! ऊँ !"

परन्तु यह समय लाड़ प्यारका नहीं था। यह समय था सैकड़ों गुलामोंके मालिक आफ़ताबखानके रोबकी परीक्षाका। ज़मीन्दारने बालककी परवाह नहीं की। बायें हाथसे गुलशनको पकड़ कर, दायाँ हाथ ऊँचा उठा कर वह कोड़ोंकी मार शुरू करनेका आदेश देने ही वाला था कि बालक और भी अधिक ऊँचे स्वरमें मचल उठा—" ऊँ ! ऊँ ! छोड़ दो ! मैं नहीं मानता ! छोड़ दो। ऊँ ! ऊँ ! "

पिताने अब भी अपने लाड़ले पुत्रकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया। उसने अपना दायाँ हाथ उठा ही दिया। अभागे हाशिमकी पीठपर पहला कोड़ा पड़ने ही वाला था कि बालक गुलशन ज़मीनपर लोट लोट कर ऊँचे स्वरमें रोने लगा—" ऊँ ! ऊँ ! ऊँ ! "

ज़मीन्दारका उठा हुआ हाथ स्वयं नीचे झुक गया। उसने कहा—" बड़ा ज़िद्दी लड़का है। " अगले ही क्षण आफ़ताबखानने गुलशनको अपनी गोदमें उठा लिया। इसके बाद हाशिमकी ओर मुखातिब होकर कहा—" तुम्हारे छोटे आक़ाके हुक्मसे तुम्हें इस बार माफ़ किया जाता है। "

दोनों हबशी जमादारोंने शीघ्रतासे हाशिमको टिकटीसे खोल दिया।

बालक गुलशन अपने पिताकी गोदसे उतर कर भागा हुआ हाशिमके पास पहुँचा। अबोध बालकने अत्यधिक सरल मुस्कराहटके साथ पूछा—" बुड्ढे ! तूने पिस्ते खा लिये थे या नहीं ? "

भूल

-०-

(१)

उस विकृत परन्तु अत्यन्त गम्भीर चेहरेवाले सरपञ्चने गूँजती हुई आवाज़में पुकारा—" कमाण्डर ! "

एक पतला सुकड़ा रूसी नवयुवक बड़ी शीघ्रतासे सरपञ्चके सम्मुख आ उपस्थित हुआ। उसने कहा—" हुज़ूर ! "

सरपञ्चने पूछा—" जानवर कहाँ है ? "

रूसी नययुवकने उत्तर दिया—" बाहर खड़ा है। "

सरपञ्चने कहा—" उसे बुला लाओ। "

कमाण्डर एक बार झुककर बाहर चला गया। कमरेमें फिरसे पूरी तरह सन्नाटा छा गया। सरपञ्चकी ऊँची कुरसीके नीचे, उसके पैरोंके पास पाँच व्यक्ति तलवार लिये हुए खड़े थे। ये लोग क्रान्तिकारी संघके मुखिया थे। रूसी क्रान्तिकारी लोग अपने दलके रँगरूटोंको 'जानवर' नामसे पुकारते थे। आज जिस जानवरको दलके नेताओंके सम्मुख दीक्षा लेनेके लिये लाना था, वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति था। रूसी राजघरानेसे उसका सीधा सम्बन्ध था। अतः दलके ये अधिकारी लोग आज बहुत अधिक सतर्क और गम्भीर थे। इस 'जानवर'का नाम क्रोपेट था। थोड़ी ही देरमें क्रोपेटने कमरेमें प्रवेश करके सरपञ्चको झुककर प्रणाम किया; परन्तु सरपञ्चने उसके प्रणामका कोई जवाब नहीं दिया।

क्रोपेट बड़ी श्रद्धा और सम्मानके साथ सरपञ्चकी ओर देखने लगा। सरपञ्चकी बड़ी बड़ी आँखें और खुरदरी चमड़ीवाला गोल चेहरा देख-

कर उसने समझ लिया कि किसी समय वह एक अत्यन्त सुन्दर मनुष्य रहा होगा, परन्तु इस क्रान्तिकारी संघमें प्रविष्ट होकर, नियमानुसार, उसने तेज़ाब डालकर अपनी मुखाकृति बिगड़वा ली है। क्रोपेट इस अद्भुत् व्यक्तिको बड़े विस्मयके साथ देखने लगा। सरपञ्च भी बड़े गौरसे उसकी तरफ़ देख रहा था। सम्भवतः वह क्रोपेटके मुखके दर्पणमें उसके मनोभावोंका अध्ययन करनेका प्रयत्न कर रहा था।

इस सन्नाटेमें क्रोपेट अपने ही विचारोंमें मग्न हो गया था; परन्तु थोड़ी देर बाद वह सरपञ्चकी गम्भीर आवाज़ सुनकर चौंक उठा। सर-पञ्च उससे पूछ रहा था—"जानवर! यह जानते हो कि तुम यहाँ क्यों लाये गये हो?"

क्रोपेटने उत्तर दिया—"जी हाँ।"

सरपंचने कहा—"तुम्हें यह तो स्मरण है न कि तुम एक बहुत बड़े ज़मीन्दारके पुत्र हो? क्या तुम्हें ज्ञात है कि तुम अपनी प्रखर प्रतिभा और सुप्रसिद्ध कुलीनताके आधारपर शीघ्र ही रूसकी इस ज़ार-शाहीके भाग्य-विधाताओंमें सम्मिलित हो सकते हो?

क्रोपेट कुछ कहना चाहता था, परन्तु उसे बोलनेका अवसर न देकर सरपञ्च कहता ही चला गया—"अगर चाहो तो यहाँसे दर्पण लेकर एक वार फिर अपनी असाधारण सुन्दरताका ध्यान कर लो। तुम्हारे इस देवदुर्लभ रूपके कारण सेण्टपीटर्सबर्गकी सर्वश्रेष्ठ नवयुवतियाँ भी तुमसे विवाह करनेको लालायित है,—यहाँ आते हुए, क्षणिक आवेशमें, इस बातको भूल तो नहीं गए?."

क्रोपेटने बड़ी शीघ्रतासे केवल इतना ही कहा—"श्रीमन्! आप मुझे गाली दे रहे है।"

जिस तरह परीक्षण-नलिकामें थोड़ा थोड़ा ऐसिड डाल कर वैज्ञानिक कुछ देर तक उसके परिणामकी प्रतीक्षा करता है, उसी प्रकार सरपञ्च भी उपर्युक्त बातें कह कर क्रोपेटके चेहरेकी तरफ़ देखने लगा। क्रोपेट अब सरपञ्चके पैरोंकी तरफ़ ताक रहा था।

कुछ देर बाद सरपञ्च फिर बोला। इस बार उसने क्रोपेटको 'जानवर' के नामसे संबोधित नहीं किया। उसने कहा—" क्रोपेट, जानते हो—हमारा काम कितना नृशंसतापूर्ण है ? हम लोग सन्देह मात्र पर हत्या कर देते हैं। सुखी गृहस्थोंपर डाका डालते हैं। कहीं बालक चीख़ न उठे, इसी भयसे उसका गला घोंट देते हैं। मौका पड़ने पर निरपराध स्त्रियोंतकका भी हमें वध करना पड़ता है। दूसरी ओर हमारा जीवन भी सुरक्षित नहीं है। प्रतिक्षण हमें पकड़े जानेका, फाँसीपर लटकाये जानेका भय रहता है। इसपर हमारे देशके बहुतसे यशस्वी और समझदार नेता हमें 'खूनी,' 'लुटेरा' और 'देशद्रोही' समझते हैं। यहाँ आनेसे पूर्व तुमने इन सब बातोंपर भी विचार किया है या नहीं ?"

क्रोपेटकी आँखोंमें आँसू छलक आए। उसने सिर झुकाकर उत्तर दिया—" ठीक इसी तरहके पवित्र और निष्काम देशसेवक सदासे मेरी कल्पनाके देवता रहे हैं।"

इसपर सरपञ्चने अपनी जेबसे काग़जका एक टुकड़ा निकाल कर क्रोपेटके हाथोंमें दिया। चरबीकी बड़ी बड़ी बत्तियोके धुँधले प्रकाशमें क्रोपेट उसे पढ़ने लगा—" मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजसे इस संघकी प्रत्येक आज्ञाका बिना विरोध पालन किया करूँगा। संघकी प्रत्येक बात गुप्त रख कर उसके सदस्यत्वकी सब शर्तें पूरी करूँगा।" अपनी द थोड़ा खून निकाल कर क्रोपेटने इस कागज़पर दस्तख़त भी बना। रूसी क्रान्तिकारी सङ्घका यही नियम था।

इसके बाद क्रोपेटके धैर्य और सहनशीलताकी कठोरतम परीक्षा ली गई। उसके नाखूनोंमें बड़े बड़े पिन चुभाये गए, उसे १० मिनिट तक लोहेके एक गर्म तख्तेपर, बिना पैर हिलाये खड़ा रहनेकी आज्ञा दी गई। क्रोपेट यद्यपि आजतक राजकुमारोंकी तरह पला था, फिर भी वह इन दोनों कठोर परीक्षाओंमें इतनी उत्तमतासे उत्तीर्ण हुआ कि सरपञ्चका गम्भीर चेहरा भी अत्यधिक प्रफुल्लित हो उठा।

रूसी क्रान्तिकारी दलके मुखियाओंकी बैठक उसी स्थानपर शुरू हो गई। इस नये जानवरके सम्बन्धमें विचार होने लगा। सभी मुखिया-ओंने क्रोपेटको इसी समय 'नायक'का पद दे देनेकी सिफ़ारिश की। किसी नए जानवरके लिये यह सम्मान कल्पनासे भी परेकी वस्तु था। कौन्सिल समाप्त हुई। सरपञ्चने क्रोपेटको मखमलसे मढ़ी हुई एक चौकी-पर अपना दाहिना घुटना टेकनेका आदेश दिया। 'नायक' बनानेकी रस्म अदा की जाने लगी। इस रस्मके अन्तमें जब सरपञ्च क्रोपेटकी कमरमें तलवार बाँधने लगा, तब एक मुखियाने झटसे अपना बायाँ हाथ आस्मानमें उठा दिया।

सरपञ्च एक साथ दो कदम पीछे हट गया। उसने बड़ी शीघ्रतासे पूछा—"कहो, तुम्हें इसमें क्या आपत्ति है?"

वह मुखिया अपनी बात कहते हुए सम्भवतः कुछ घबराहट अनुभव कर रहा था। उसे शीघ्रतासे उत्तर देते हुए न पाकर सरपञ्चने बड़ी अधीरतासे पूछा—"कहो, जल्दी कहो—तुम्हें इस कार्रवाईमें क्या आपत्ति है। इस तरह मुफ़्तमें समय खराब मत करो।"

वह मुखिया घबराई हुई-सी आवाज़में बोला—"सरपञ्च! किसी 'जानवर'को सीधा 'नायक' बनानेके लिये एक आवश्यक बात यह भी

है कि तेज़ाब, नश्तर या इसी प्रकारकी किसी अन्य चीज़द्वारा उसकी मुखाकृति बिगाड़ दी जाय।"

सरपञ्च विचलित हो उठा। एक मिनट तक चुपचाप इस नई समस्या-पर विचार करते रहकर वह जल्दी जल्दी बड़बड़ाया—"नहीं। यह असम्भव है। क्रोपेटके सुन्दर मुखपर तेज़ाब छिड़कनेकी आज्ञा मैं नहीं दे सकता।"

क्रोपेटको नायक बनानेकी रस्म पूरी कर दी गई। सभी सरदार आश्चर्यसे सरपञ्चकी ओर देख रहे थे। उन्हें विस्मय था कि आज सरपञ्चको यह क्या हो गया है। परन्तु नियमानुसार वे अब सरपञ्चकी आज्ञाका विरोध न करनेके लिये बाधित थे। सभी सरदारोंने बारी बारीसे क्रोपेटसे हाथ मिलाया। सबसे अन्तमें सरपञ्चने क्रोपेटको गले लगाकर उसे अपने दलमें सम्मिलित कर लिया।

(२)

'मास्को-ख़रकाफ़-मेल'के दूसरे दर्जेमें क्रोपेट अकेला सफ़र कर रहा था। उसका चेहरा आज अत्यन्त गम्भीर था। आँखोंसे विनय और आत्म-विश्वासका भाव टपक रहा था। अभी हालहीमें वह क्रान्तिकारी दलके लिये एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण कार्य करके आ रहा था। वह मास्कोसे रूसके जेलोंके सम्बन्धका सम्पूर्ण पत्रव्यवहार चुरा कर ला रहा था। क्रान्तिकारी दल निरन्तर ६ माससे जिस बातके लिये जी तोड़कर कोशिश कर रहा था, उसमें सफलता प्राप्त करके भी क्रोपेटके चेहरेपर प्रसन्नताका कोई चिह्न नहीं था। उन रहस्य-मय काग़ज़ोंको अपने बेढंगे बिस्तरेमें लपेटकर क्रोपेट उससे ढासना लगाए बैठा था। जिस प्रकार भारी तूफ़ान गुज़र जानेके बाद समुद्र फिरसे अत्यन्त गम्भीर स्वरूप

धारण कर लेता है, उसी प्रकार क्रोपेटके मुखकी यह शान्त मुद्रा भी निकट भूतकी किसी विकट हलचलका अवशिष्ट रूप थी। इस मामलेमें क्रोपेट जेल-महकमेके दो ग़रीब क्लार्कोंकी हत्या करके सफलता प्राप्त कर सका था, सम्भव है कि उसकी गम्भीर शान्तिका यह भी एक कारण हो।

क्रोपेट स्वभावसे बहुत ही कोमल और दयापूर्ण प्रकृतिका मनुष्य था। उसकी बड़ी बड़ी आँखोंसे एक अद्भुत एकाग्रता और चञ्चल सन्तोषका भाव टपकता था। पिछले दो सालोंके जीवनमें, अवसर पड़नेपर, उसने अनेकों हत्याएँ भी की थीं, परन्तु भारतवर्षके निष्काम योगियोंकी तरह उसके निर्मल हृदयपर इन नृशंस हत्याओंकी कोई छाप नहीं पड़ी थी। क्रान्तिकारी दलमें उसका एक विशेष स्थान था। दलकी कोई बात भी उसकी सलाह लिये बिना न की जाती थी। इसपर भी उसका स्वभाव संघके सदस्योंके लिये एक पहेली था। क्रोपेटका हृदय इस ओर फूलसे भी अधिक नरम था और दूसरी ओर वज्रसे भी अधिक कठोर। आश्चर्य तो यह था कि कभी कभी उसके चरित्रके ये दोनों सर्वथा प्रतिकूल पहलू, केवल कुछ घण्टोंके अवधानहीसे क्रियात्मक रूप धारण किया करते थे। कभी कभी वह ग्रामीण रूसी किसानोंके झोपड़ोंमें जाकर सम्पूर्ण रात किसी निराश्रय रोगीके सिरहाने बैठ कर गुज़ार देता, और उससे अगले प्रातःकाल ही किसी सरकारी खज़ानेपर डाका डालनेके लिये उसकी बाहुओंमें खुजली होने लगती थी।

क्रोपेट अपने बिस्तरेसे ढासना दिये हुए ही, पहाड़ी उपत्यकाके हरे भरे जंगलोंको देखने लगा। आस्मानमें बादल छाये हुए थे। मालूम होता था कि बहुत शीघ्र खूब जम कर पानी बरसेगा। इस ऊँचे नीचे मार्ग-पर डाकगाड़ी बरसाती कीड़ोंकी तरह गोल मोल होकर चल रही थी।

सब ओर सन्नाटा था। इसी तरह धीरे धीरे चल कर गाड़ी 'ओरेल' जंकशनपर आकर खड़ी हो गई। इस समय तक पानी पड़ना शुरू हो गया था। ठण्डी हवा चल रही थी अतः क्रोपेट अपना लबादा ओढ़कर स्टेशनके बुकस्टालकी तरफ़ गया। वहाँ लकड़ीके चौखटोंमें ७ जुलाईके विभिन्न अखबारोंके समाचार जड़े हुए थे। क्रोपेटने उड़ती निगाहसे उपेक्षाके साथ इन कागज़ोंकी ओर देखा। यह क्या! क्रोपेट सहसा चौंक उठा। क्षणभरके लिये उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो भयंकरतासे पृथ्वी हिल रही है। दैनिक अखबारोंके इन विज्ञापनोंपर मोटे मोटे लाल अक्षरोंमें छपा हुआ था—

७ जुलाई........

'क्रान्तिकारी संघका फण्डाफोड़!'

'संघका सरपञ्च पकड़ा गया!'

'पोलीस विभागके मुख्य अध्यक्ष मोशिये-ड्रावरको १ लाख रूबल इनाम'

क्रोपेटने बड़ी मुश्किलसे अपनेको सँभाला। सम्पूर्ण बलसंग्रह करके वह स्टालके निकट पहुँचा। चुपचाप ७ जुलाईके दो-तीन अख़-बार खरीद कर वह अपने डिब्बेमें लौट आया। इसी समय सीटी देकर डाकगाड़ी चल दी। क्रोपेट अखबारपर नज़र गड़ा कर उसे पढ़ रहा था। उसने पढ़ा कि सरपञ्चको गिरफ्तार करनेवाला व्यक्ति उसका अपना सगा भाई मोशिये ड्रावर ही है!

इसके बाद क्रोपेट खरकाफ़ नहीं गया। अगले जंकशनपर वह यह डाकगाड़ी छोड़कर साइबेरियाकी तरफ़ चला गया।

(३)

सरपञ्चको गिरफ्तार हुए तीन मास बीत चुके हैं। उन्हें शीघ्र ही प्राणदण्ड दिया जानेवाला है। क्रान्तिकारी दलका संगठन अब नष्टप्राय सा हो गया है। मातृभूमिकी स्वतन्त्रताकी उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करनेवाले दल अब करीब करीब निराश हो चुके हैं। कुछ क्रान्तिकारियोंने सरपञ्चको छुड़ा लानेका प्रयत्न भी किया था, परन्तु वे स्वयं ही गिरफ्तार हो गए। अतः अब किसी व्यक्तिमें यह साहस शेष नहीं रहा कि वह सरपञ्चकी रक्षाके लिये कोई प्रयत्न करे।

आश्चर्य इस बातका है कि सरपञ्चके कैद होनेके बादमे ही उनका दायाँ हाथ क्रोपेट भी लापता है। सरपञ्चकी गिरफ्तारीसे १०–१२ दिन पूर्व संघने उसे एक आवश्यक कामके लिये मास्को भेजा था। उस दिनके बादसे यह मालूम नहीं हुआ कि क्रोपेट कहाँ चला गया है। शुरू शुरूमें दलके लोग यह समझते थे कि सम्भवतः सरपञ्चकी सहायता करनेके उद्देश्यसे ही क्रोपेट इस प्रकार अन्तर्धान हो गया है; परन्तु इतने दिनों तक उसका कोई समाचार न पाकर लोगोंका यह विश्वास लगभग मिट गया है।

अब क्रान्तिकारी संघमें, क्रोपेटके सम्बन्धमें दो विचार हैं। दलके बहुमतका यह पूर्ण विश्वास है कि असलमें क्रोपेट स्वयं ही खुफिया विभागका कोई उच्च अधिकारी था। वह सरपञ्चको गिरफ्तार करानेकी इच्छासे ही इस संघमें सम्मिलित हुआ था। अपनी इस स्थापनाके लिये ये लोग दो युक्तियाँ देते हैं। इसका पहला प्रमाण यह है कि सरपञ्चको

गिरफ्तार करनेवाला व्यक्ति क्रोपेटका सगा भाई मो० डूावर है, जो सेण्ट-पीटर्सवर्गकी पोलीसका मुख्य अध्यक्ष है। इन लोगोंकी दूसरी युक्ति है, क्रोपेटका इस प्रकार सहसा गुम हो जाना। अन्य लोगोंका यह मत है कि क्रोपेट सरकारसे डरकर कहीं छिप गया है। ये आपत्तिकें दिन निकल जानेपर वह फिरसे क्रान्तिकारी दलकी नवीन आयोजना करेगा।

(४)

साइबेरियाके पुराने किलेमें लोहेका एक रुद्ररूप पिंजरा रक्खा हुआ था। ओससे बचानेके लिये पिंजरेकी छत टीन डालकर बनाई गई थी। नवम्बरका महीना था। शिद्दतकी सरदी थी। चारों तरफ़ बरफ़के ऊँचे ऊँचे अम्बार लगे हुए थे। सनसनाती हुई तेज़ बरफ़ीली हवा चल रही थी। दोपहरका समय था, परन्तु घने कुहरेकी धुँधके कारण ऐसा प्रतीत होता था कि शीघ्र ही रात होनेवाली है। लोहेके इस भयंकर पिंजरेमें दो एक फटे-पुराने कम्बल ओढ़कर सरपञ्च बैठा हुआ था। किसी ज़माने में यह पिंजरा ज़ारके शेर रखनेके काममें आता था। कहते हैं कि यह पिंजरा उन दिनों आजकलकी अपेक्षा बहुत अच्छी हालतमें था—तब इसमें सरदी और हवाका इतना अबाधित प्रवेश न था। कुछ भी हो, इतना तो फिर भी कहा जा सकता है कि सरपञ्च इस पिंजरेमें उदास नहीं था। उसकी शारीरिक दशा अवश्य बिगड़ गई थी, परन्तु उसके चेहरेपर किसी प्रकारके दुःखका भाव दिखाई नहीं देता था। वह बिलकुल गम्भीर और शान्त रहता था। पहरेदारोंने भी शायद ही कभी उसकी आवाज़ सुनी हो। मृत्युदण्डके साधारण कैदियोंकी तरह वह चिड़चिड़ा या ग़मग़ीन नहीं बन गया था। किसी सन्तरीको उससे किसी प्रकारकी शिकायत नहीं थी। वह इस समय कम्बलोंमें सिकुड़कर शान्त-भावसे, सामनेकी बर्फ़से ढकी हुई पहाड़की चोटीकी ओर देख रहा था।

पिंजरेके बाहर आठ दस सशस्त्र सिपाही पहरेके लिये नियुक्त थे। रूसके ये सिपाही बिलकुल उजड्ड और बेपरवाह होते थे। ये सब लोग एक अँगीठीके चारों ओर, टोली बनाकर गप्पें लगा रहे थे। मुफ्तमें बारी बारीसे पिंजरेके चारों तरफ़ मार्चिङ्ग करते फिरना, उन्हें अनावश्यक और मूर्खतापूर्ण प्रतीत होता था।

इनमेंसे एक सिपाही खूब लम्बी दाढ़ी मूँछोंवाला था। इस लिये उसके साथी उसे 'दढ़ियल' कहके बुलाते थे। यह बड़ा ही हँसोड़ और बातूनी था। अन्य सब सिपाही उसके साथ ड्यूटीपर जानेके लिये उत्सुक रहा करते थे। करीब दो माससे ही वह इस किलेकी पोलीसमें सम्मिलित हुआ था। उसका पूर्वपरिचय लोग इतना ही जानते थे कि पहले वह एक कोयलेकी खानमें मज़दूरका काम किया करता था, परन्तु पीछेसे बाबू बननेकी प्रवृत्ति उसे इस महकमेमें खींच लाई। वह अपनी दाढ़ी मूँछोंसे बहुत प्रेम करता था। उसमें एक विचित्रता यह भी थी कि वह सदैव दो कोट, दो पटलूनें और दो कमीज़ें पहिना करता था। दूसरे सिपाही जब इसपर उसकी मखौल उड़ाते तब वह जवाब दिया करता—"बाबा, क्या करूँ? उम्रभर बन्द और गरम कोयलेकी खानमें काम किया है, अब यह सरदी, यह ठण्डी हवा कैसे बरदाश्त करूँ?"

बातचीतके सिलसिलेमें एक सिपाहीने कहा—"यार! गज़बकी सरदी है।"

दूसरा बोला—"यह झंझट कब समाप्त होगा?"

दढ़ियल बोला—"दस महीनेके अन्त तक यह मामला अवश्य समाप्त हो जायगा।"

पहले सिपाहीने पूछा—“ क्यों, क्या फाँसीकी तारीख़ मुकर्रर हो गई ? ”

ऊँचे स्वरसे हँसते हुए दढ़ियलने कहा—“ नहीं, फरमानकी ज़रू-रत ही क्या है। यह शिद्दतकी सरदी ही इस क़ैदीका काम तमाम कर देगी। देखो न, किस तरह सिकुड़ा हुआ पड़ा है—जैसे लिपटा हुआ बिस्तरा हो। ”

सब सिपाही खिलखिला कर हँसने लगे।

बस, दढ़ियलकी सभाका रंग जम गया। वह तिलस्मी कहानियोंकी तरह अपने कोयलेकी कामके अनुभव सुनाने लगा। धीरे धीरे कुहरा साफ़ हो गया। सूर्य भगवानके दर्शन सुलभ हो गए।

अचानक दूरपर बैठकके पीछेसे “ आग, आग ” का ऊँचा शोर सुन कर यह मण्डली इस तरह बर्खास्त हुई जिस तरह पत्थरकी चोट खाकर भिड़ोंका छत्ता खाली होता है। सब लोग एक साथ उसी तरफ़ भागे। इसी समय बैठककी ओरसे एक सिपाही ऊँचे स्वरमें आग लग जानेकी सूचना देता हुआ पिंजरेकी तरफ़ आया। सब सिपाही तो पहले ही उसी तरफ़ भागे जा रहे थे। दढ़ियल महाशय भी इसी टोलीके साथ भागनेका उद्योग कर रहे थे। दढ़ियलने भारी भरकम दोहरे कपड़े पहिन रक्खे थे, अतः जब वह जोरसे न दौड़ सकनेके कारण सबसे पिछड़ गया, तब उसने चिल्लाना शुरू किया—“ अरे नालायको ! इस क़ैदीको अकेला छोड़ कर कहाँ भागे जा रहे हो। ” परन्तु किसीने दढ़ियलकी इस बातका जवाब नहीं दिया। यह देख कर दढ़ियल ठहर गया। इसी समय बैठककी ओरसे दौड़ कर आया हुआ सिपाही दढ़ि-यलके पास आकर बोला—“ चलो, क़ैदीपर हम दोनों पहरा दें। ”

दढियल बिना आनाकानी किये वापस आया।

सरपञ्च भी कौतूहलके साथ अग्निकी उन प्रचण्ड लपटोंकी तरफ़ देख रहा था। इसी समय अचानक उसे पुकारनेकी आवाज़ सुनाई दी। कोई बरसोंसे परिचित स्वरमें कह रहा था—“ सरपञ्च ! ”

सरपञ्चने आश्चर्यके साथ पीछेकी तरफ मुड़कर देखा। दढ़ियल उसे पिंजरेके बाहर खड़ा होकर बुला रहा था। दो एक क्षण तक दढ़ियलकी ओर विस्मयके साथ देखते रह कर सरपञ्च भी चिल्ला उठा—“क्रोपेट !” सरपञ्च खुशीसे उन्मत्त हो गया था।

समय अधिक नहीं था। दढ़ियलने अपनी दोहरी पोशाक उतार कर सरपञ्चको पहिननेको दी। सरपञ्चके पुराने कपड़ोंको इस तरह डाल दिया गया कि वे किसी लेटे हुए आदमीके समान प्रतीत हो। इसके बाद क्रोपेटने दरवाजा खोलकर सरपञ्चको पिंजरेसे बाहर निकाल लिया।

पिंजरेके बाहर, आगकी अँगीठी अभीतक उसी प्रकार सुलग रही थी। उसके चारों ओर बैठककी तरफ़ भागे हुए सिपाहियोंकी बन्दूकें अस्तव्यस्त रूपमें बिखरी पड़ी थीं। इनमेसे तीन बन्दूकें लेकर ये तीनों आदमी, सैनिक वेशमें किलेके फाटककी ओर चले।

ये तीनों सिपाही कदम मिलाते हुए फाटकपर पहुँचे। सरपञ्चको बीचमें करके उसके एक ओर क्रोपेट चल रहा था और दूसरी ओर बैठककी तरफ़से भाग कर आया हुआ सिपाही। किलेके फाटकपर भी इस समय केवल दो तीन सिपाही ही बचे थे। शेप सब अग्निकांडका दृश्य देखनेके लिये चले गए थे। ये लोग भी फाटकसे १०–१५ गज दूर, धूपमें बैठ कर सम्भवतः आगके सम्बन्धमें ही बातचीत कर रहे थे। दो अन्य सिपाहियोंके साथ दढ़ियलको किलेसे बाहर जाता हुआ देखकर एक पहरेदारने बैठे बैठे ही पूछा—“ क्यों दढ़ियल, कहाँ चले हो ? ”

दढ़ियलने बिना ठहरे ही उत्तर दिया—"अरे यार! हमारा कमाण्डर भी बड़ा मनहूस है। आज इतने दिनोंबाद जाकर तो एक दिलचस्प तमाशा देखनेको मिला और वह हमें इसी घड़ी चौकीपर इस मामलेकी इत्तला देनेके लिये भेज रहा है।"

पहरेदार एक बार धीमेसे हँसकर फिर अपनी बातचीतमें लग गये। ये तीनों व्यक्ति फाटकके बाहर आकर दो तीन घण्टेमें ही, बड़ी बड़ी चट्टानोंसे परिपूर्ण उस पहाड़ी उपत्यकाके घने जंगलमें छिप गए।

(५)

क्रान्तिकी ज्वालाएँ अब देशभरमें व्याप्त हो गईं। दलके नेताओंको इस बातका मौका ही न मिला कि वे सरपञ्चको मौतके मुँहसे बचा लानेके उपलक्ष्यमें कोई खुशी मना सकें। उस दिन किलेके फाटकसे बाहर आकर जब सरपञ्चको मालूम हुआ कि क्रोपेटके निर्देशसे ही उसका वह साथी स्वयं बैठकमें आग लगाकर पिंजरेकी तरफ भाग आया था, तब सरपञ्चने बड़ी कृतज्ञतापूर्ण भाषामें उन दोनोंको धन्यवाद दिया था। इसके अतिरिक्त इन लोगोंके साथ अन्य कोई विशिष्ट व्यवहार नहीं किया गया। सरपञ्चका स्वास्थ्य अब बहुत बिगड़ गया था, अतः उसने अब अपने मनमें यह दृढ़ धारणा कर ली थी कि क्रान्तिकारी सङ्घके सम्बन्धमें दो एक विशेष महत्त्वपूर्ण कार्य और करके, वह क्रोपेटको ही सङ्घका सरपञ्च बना देगा। दिल ही दिलमें उसने क्रोपेटके दूसरे साथीको भी शीघ्र ही नायक बना देनेका पूर्ण निश्चय कर लिया था। परन्तु अभी तक उसने अपना यह विचार क्रोपेट तकको भी नहीं बताया था। नये नये कामोंकी धुनमें उसे इस बातका अवसर ही नहीं मिला था।

आज एक बड़े गम्भीर विषयपर विचार करनेके लिये क्रान्तिकारी सङ्घके नायकोंकी विशेष बैठक हो रही थी। सरपञ्चकी ऊँची कुर्सीके नीचे

उसके ठीक सामने क्रोपेट भी अपने स्थानपर बैठा हुआ था। इसी समय सरपञ्चने अपनी जेबसे एक छोटासा फोटो बाहर निकाला। क्रोपेट यह फोटो देखते ही चौंक उठा। उसके मुखसे अनायास ही निकला—"ओह मोशिये लीमैन!"

सरपञ्च आश्चर्यके साथ क्रोपेटके मुँहकी तरफ़ देखने लगा। उसने पूछा—"क्रोपेट, तुम इस आदमीको जानते हो?"

क्रोपेटने इस प्रश्नका कोई जवाब नहीं दिया। उसकी नसोंमें खून बड़े वेगसे गति कर रहा था। क्रोपेटको चुप देखकर सरपञ्चने गूँजती हुई आवाज़में फोटोके नीचे लिखा हुआ नाम पढ़ा—"मोशिये लीमैन, एस० पी० के लार्ड मेयर।"

इसके बाद सरपञ्चने एलान किया—"आगामी १० मईकी रात तक इस व्यक्तिकी हत्या हो जानी चाहिये।"

क्रोपेट अब चुप न रह सका। उसने लड़खड़ाते हुए स्वरमें सरपञ्चकी इस बातका प्रतिवाद किया—"ओह, मोशिये लीमैन तो बहुत ही भला आदमी है, उसका वध करनेकी क्या आवश्यकता आपड़ी है!"

तेज़ निगाहसे क्रोपेटके चेहरेकी तरफ देखकर सरपञ्चने क्रोधभरे स्वरमें आदेश दिया—"चुप रहो।"

क्रोपेट समझ गया कि उससे अपराध हुआ है। वह सिर नीचा करके चुप हो गया।

लार्ड मेयरके वधका काम किसके सपुर्द किया जाय, इसके लिये पर्चियाँ डाली गईं। भाग्यवश क्रोपेटका ही नाम निकला। क्रोपेटके चेहरेका रँग फक पड़ गया। आँखें नीचेकी ओर झुक गईं। इसी समय क्रोपेटकी ओर फोटो बढ़ाकर सरपञ्चने पूछा—"क्रोपेट! तैयार हो?"

क्रोपेटने काँपते हुए हाथोंसे वह फोटो ले लिया। यह स्वीकृतिका चिह्न था। सरपञ्चके साथ अन्य सब सरदारोंने खड़े होकर क्रोपेटकी सफलताके लिये ईश्वरसे प्रार्थना की।

(६)

बचपनमें सुने हुए किसी मधुर संगीतकी सुखद स्मृतिकी तरह क्रोपेटको अपने जीवनका कोई अतीत, रोचक पहलू याद हो आया। उसका हृदय झनझना उठा। बड़ी तपस्याओं और साधनाओंकी सहायतासे उसने अपनी जिन मानसिक भावनाओंका दमन किया था, वे सब मोशिये लीमैनकी स्मृतिके साथ ही साथ और भी अधिक प्रबलतासे उसकी आँखोंके सम्मुख नाचने लगीं। क्रोपेट उन भावोंका मुकाबिला नहीं कर सका। मोशिये लीमैनके बंगलेके अहातेवाले बाग़का ख़ाका अपने साथ, उसके मानसिक नेत्रोंके सन्मुख जो मनोहारी चित्र लाया, उसे क्रोपेट हठात् अपने मस्तिष्कसे दूर नहीं कर सका। उसने अपने हृदयको ढीला छोड़ दिया। उठती हुई जवानीमें उसका किशोर और उत्साही हृदय जिस अनिन्द्यसुन्दरी देवीकी प्रतिमूर्तिका दिनरात चिन्तन किया करता था, बरसोंके बाद आज फिर वही मूर्ति उसके नेत्रोंके सम्मुख घूमने लगी। क्रोपेट, क्रान्तिकारी दलका नायक क्रोपेट, मोशिये लीमैनकी एक मात्र कन्या—अपनी प्रणयिनी, रोजेलिनकी यादमें मग्न हो गया।

मो० लीमैन एक बहुत ही लब्धप्रतिष्ठ, उदार, मानी और सरल प्रकृतिके मनुष्य थे। वर्षोंसे सेण्टपीटर्सवर्गकी जनता, एक बहुत बड़े बहुमतसे लगातार उन्हींको अपना लार्ड मेयर चुन रही थी। लार्ड मेयरका बंगला शहरसे बाहर एक बड़े बाग़में था। उनकी पत्नीका, बरसों हुए देहान्त हो चुका था। उनके दो पुत्र बड़े होकर उच्च सरकारी ओहदोंपर

काम कर रहे थे। इस बंगलेमें वह अपनी एक मात्र कन्या रोज़ेलिनके साथ रहा करते थे। रोज़ेलिन देवकन्याके समान आकर्षक और चञ्चल बालिका थी।

आज जो युग अतीतके काले पर्देकी ओटमें छिप चुका है, उसकी स्मृति क्रोपेटको अधीर बनाने लगी। क्रोपेटको वे दिन स्मरण हो आये, जब उसके पिता उसे अपने साथ लेकर मोशिये लीमैनके बंगलेपर, उनसे मिलनेके लिये जाया करते थे। उन दिनों क्रोपेट १६–१७ बरसका एक तेजस्वी बालक था। मो० लीमैनसे क्रोपेटके पिताकी प्रगाढ़ घनिष्ठता थी। दोनों प्रायः एक दूसरेके यहाँ आते जाते रहते थे। सायंकालके समय, जब वे दोनों प्रौढ़ मित्र अपनी किसी उधेड़बुनमें मस्त हो जाते थे—बालक क्रोपेट और बालिका रोज़ेलिन सहनके हरेभरे निकुञ्जोंमें एक साथ खेला करते थे। वहाँ और कोई नहीं होता था—होता था एक किशोर अवस्थाका बालक और एक बारह तेरह बरसकी बालिका। वे दोनों खेलते थे, कूदते थे, तसबीरें देखते थे, धीरे धीरे टहलते थे और कभी कभी खूब तन्मय होकर आपसमें बातें भी किया करते थे। वे दोनों अबोध बालक थे, उन्हें कोई दुख नहीं था, कोई चिन्ता नहीं थी—फिर भी उनके पास तन्मय होकर आपसमें बातें करनेके लिये बातोंका असीम कोश था। बागकी बेलें, घरके कुत्ते, तालाबकी मछलियाँ और मौसमी फल उनकी बातचीतके कभी न थकानेवाले विषय होते थे। दोनोंका हृदय बिल्कुल निष्कलङ्क, अबोध और पवित्र था। फिर भी वे एक दूसरेसे असाधारण स्नेह करते थे। उनके इस स्नेहमें कोई वासना या भौतिक इच्छा नहीं होती थी।

परन्तु कालके एक मधुर अन्तरालने धीरे धीरे इन दोनों किशोर हृदयोंको चुपचाप एक दूसरेके साथ सी दिया। मालूम नहीं, यह बात

किस दिन हुई। जिस तरह क्रोपेट और रोज़ेलिन अपने अनजानमें ही, केवल कालके अवधानसे, बालकसे नवयुवक बन गए, ठीक उसी तरह इन बालकोंका निष्कलङ्क प्रेम भी न जाने किस मुहूर्त्तमें नवयुवक और नवयुवतीका प्रेम बन गया। अब प्रेमके साथ ही साथ वे एक दूसरेको चाहने भी लगे। उनके पारस्परिक व्यवहारमें धीरे धीरे एक खास गम्भीरताका समावेश हो गया।

क्रोपेटकी इन मधुर स्मृतियोंका सबसे अधिक मार्मिक स्थल था—मोशिये लीमैनके सहनका एक 'ओक'वृक्ष। यह वृक्ष बागकी एक दिशामें छोटेसे स्वच्छ-जल-परिपूर्ण तालाबके किनारेपर छाया हुआ था। इसकी घनी छायाके नीचे एक बैञ्च पड़ी रहा करती थी। इस बैञ्चके साथ क्रोपेटके जीवनके सबसे अधिक मनोरञ्जक और कोमल अध्यायका इतिहास सम्बन्धित है। इसी बैञ्चपर बैठे बैठे एक दिन क्रोपेट और रोज़ेलिनके किशोर हृदयोंने यह अनुभव किया था कि अब वे एक दूसरेको चाहने लगे हैं। इस पवित्र ओककी मधुरतम स्मृतिके साथ ही साथ क्रोपेटको उस युगकी एक पुरानी घटना स्मरण हो आई। वह पुलकित हो उठा। उसका क्रान्तिकारी हृदय देशभक्ति आदि सभी मज़बूतसे मज़बूत बन्धन तुड़वा कर एक वार तो उस मधुर स्मृतिके साथ झनझना ही उठा। उसे वह दिन याद आया—जिस दिन मई मासकी एक स्वच्छ रातमें दोनों हृदय पहले पहल एक दूसरेसे मिले थे। उस समय आस्मानसे त्रयोदशीका चाँद पृथ्वीपर अनन्त चाँदनी बरसा रहा था। क्रोपेट और रोज़ेलिन यद्यपि बरसों एक दूसरेके साथ खेले कूदे थे; परन्तु फिर भी एक तरहसे वह दिन ही उनका प्रथम-मिलन दिवस था; उस दिनकी स्मृतिमें दोनोंने उस पवित्र ओकके तनेपर एक साथ एक तेज चाकूसे दो अक्षर खोदे थे—'के' और 'आर' (K. R.)।

क्रोपेटके मानसिक नेत्रोंके सम्मुख ये दोनों अक्षर सौ सौ गुना बड़े होकर नाचने लगे। वह धीरेसे गुनगुनाया—

"R. K."

परन्तु अगले ही क्षण वह सहसा चौंक कर उठ खड़ा हुआ। इस तरहसे—जैसे कोई मधुर स्वप्न देखते देखते उसकी नींद उचट गई हो। वह धीरे धीरे टहलने लगा। भूतोंके नगरकी तरह उसके वे सब कोमल विचार एक क्षणमें ही, न जाने कहाँ, विलीन हो गए। पहले उसे अपनी स्थिति याद आई—'वह तो रूसी क्रान्तिकारी सङ्घका नायक है!' इसके बाद उसे अपना कर्तव्य स्मरण आया—'आज ९ मईका दिन है!'

(७)

साधारण मनुष्य समझते हैं कि केवल त्याग, दया और तितिक्षामय जीवनके लिये ही साधनाकी आवश्यकता होती है। परन्तु उन्हें मालूम नहीं कि कभी कभी हत्या और घात भी एक ऐसी महती साधनाका विषय बन जाते हैं कि देवताओं तकके लिये उस ऊँची साधनातक पहुँचना कठिन हो जाता है। आज क्रोपेट इसी महान साधनाकी ताकमें था। वह छिपे छिपे, अपनेको बचाता हुआ, मो० लीमैनके बंगलेमें प्रविष्ट होना चाहता था, परन्तु उसे इसकी आवश्यकता नहीं थी। एक भरी हुई दुनाली पिस्तौल ओवरकोटमें छिपा कर वह धीरे धीरे सहनके बागमें दाखिल हुआ। बागमें एक माली, रात अधिक हो जानेके कारण फव्वारेका पानी रोकनेका प्रयत्न कर रहा था। क्रोपेटको देख कर उसने अदबसे सलाम किया। क्रोपेट चौंक उठा। उससे सलामका जवाबतक भी नहीं दिया गया। मालीने डरते डरते पूछा—"हजूर! यदि हुक्म हो तो मालिकको जगा दूँ।"

क्रोपेटने सिर हिलाकर इन्कार कर दिया। उसका दिल इतने वेगसे धड़क रहा था कि यदि कुछ भी अधिक देर तक वह मालीके सामने खड़ा रहता तो उसके बेहोश हो जानेमें कोई सन्देह नहीं था। अतः वह थोड़ासा पानी पीनेकी इच्छासे बागके तालाबकी ओर चल दिया। माली एक वार आश्चर्यसे क्रोपेटकी तरफ़ देखकर फिर अपने काममें लग गया।

क्रोपेटके पैर, उसके न चाहते हुए भी, जबरदस्ती उसे ओक वृक्षके नीचे रखी हुई बैञ्चकी तरफ खींच ले गए। वह बैञ्च आज भी ठीक उसी स्थानपर रक्खी हुई थी। क्रोपेट कटे हुए वृक्षकी भाँति इस बैञ्चके ऊपर गिर गया।

आज भी आस्मानसे चाँद टेढ़ा होकर, इस ओक वृक्षके नीचे बैञ्च-पर लेटे हुए क्रोपेटकी तरफ झाँक रहा था। परन्तु कुहरेके कारण उसकी सुधा उतनी स्वच्छ नहीं थी। क्रोपेटने सिर ऊँचा करके उस पवित्र ओक वृक्षकी ओर देखा। आँखें धीरे धीरे स्वयं अपने लक्ष्यपर आकर अटक गईं। क्रोपेटने सोचा था कि वे अक्षर तो अव तक मिट ही चुके होंगे, इस लिये अब उस तरफ़ देख लेनेमें हर्ज ही क्या है; परन्तु उस गरिमा-शाली ओक वृक्षके तनेकी ओर देखते ही क्रोपेटको अत्यधिक विस्मय हुआ। उसने देखा कि वे दोनों अक्षर आज भी इस तरह चमक रहे हैं, मानो उन्हें हालहीमें बनाया गया हो। उसी क्षण क्रोपेट यह भी समझ गया कि यह कृति किसकी है। अब वह लेटा न रह सका। ओकका वृक्ष उसे चुम्बककी तरह अपनी तरफ़ खींचने लगा। अनायास ही क्रोपेट उस वृक्ष तक पहुँच गया। एक वार वह फिर गुनगुनाया—

'K. R.'

क्रोपेट 'R' का एक हलकासा चुम्बन लेकर पागलोंकी तरह वहाँसे भाग खड़ा हुआ। वह तालाबसे एक घूँट पानी तक भी न पी सका।

पागलोंकीसी इस अकल्पनीय दशामें पहुँचकर भी क्रोपेट सँभल गया। उसने बड़ी साधनासे अपनी सम्पूर्ण शक्तिको हृदयमें केन्द्रित किया। इसके बाद अपनी प्रताड़िता, अवमानिता, जीर्णवसना, रूस-माताके दयनीय चित्रका मन ही मन स्मरण करके उसने अपने रिवाल्वर-पर हाथ रक्खा। उसकी निर्बलता दूर हो गई। अपने पिछले जन्मकी तरहसे वह मो० लीमैनकी सम्पूर्ण स्मृतियोंको कुछ देरके लिये भूल-सा गया।

शीघ्रतासे कदम बढ़ाते हुए वह लार्ड मेयरके संगमर्मरके चबूतरेपर सवार हो गया। क्रोपेट स्वयं अपनेसे डर रहा था; अतः वह कुछ भी देरी किये बिना पिस्तौल हाथमें लेकर सीधा बंगलेके बड़े हालमें प्रविष्ट हो गया। हालमें गैसका एक बड़ा हण्डा जल रहा था। वहाँ कोई आदमी नहीं था, केवल हण्डेका पैट्रोलियम वायुके दबावसे ऊपर चढ़ते हुए हलकी सी परन्तु गम्भीर ध्वनि उत्पन्न करके, हालकी निस्तब्धताको भंग कर रहा था। हालके उत्कट प्रकाशमें पहुँच कर क्रोपेट फिरसे शिथिल पड़ गया। इस हालके दायीं ओर रोज़ेलिनका शयनागार था और बायीं ओर ३—४ कमरे छोड़ कर, लार्ड मेयरके सोनेका कमरा था। रोज़ेलिन इस समय क्रोपेटसे केवल १०—१२ गजके व्यवधानपर ही सो रही है— इस विचारने क्रोपेटको एकदम क्रिया-हीन बना दिया। लक़्वेके बीमारकी तरह उसका सारा शरीर काँपने लगा। उसके माथेसे पसीनेकी धाराएँ छूटने लगीं, मुँह लाल हो गया और हृदय बड़े वेगसे धड़कने लगा। इस घबराहटकी दशामें उसके हाव-भाव और भी अधिक मनोहर हो उठे थे।

अचानक यह क्या दृश्य दिखाई दिया! न मालूम किस कारण, किसी प्रकारकी आहट पाये बिना ही, कुमारी रोज़ेलिन अपने सोनेकी पोशाकमें शयनागारसे बाहर निकल कर, धीरे धीरे गैसके उस हण्डेके

नीचे आकर खड़ी हो गई ! उसके सिरपर कोई आवरण नहीं था। सिरके कोमल, सुनहले बाल, अस्तव्यस्त होकर इधर उधर बिखरे हुए थे।

क्रोपेटके शरीरमें बिजली घूम गई। बड़ी शीघ्रतासे उसने अपना पिस्तौल जेबमें डाल लिया। वह एकटक निर्निमेष दृष्टिसे रोज़ेलिनकी तरफ़ देखने लगा। रोज़ेलिनकी निगाह अभी तक क्रोपेटपर नहीं पड़ी थी, इसपर भी क्रोपेट न तो उसे बुला ही सका और न वहाँसे हिल ही सका।

बरसोंके बाद अपने दिन रातकी मधुर-स्मृति क्रोपेटको, इतनी रात बीत जानेपर, अचानक अपने ही शयनागारके किनारे खड़ा हुआ देख कर, पहले तो रोज़ेलिन अपनी आँखोंपर विश्वास ही न कर सकी। इसके बाद वह उन्मत्तकी तरह क्रोपेटकी तरफ़ बढ़ी। उसने पुकारा— "प्रियतम क्रोपेट !"

रोज़ेलिनको अपने इतना निकट पाकर पहले तो क्रोपेट दो एक कदम पीछे हट गया, इसके बाद आगे बढ़कर उसने रोज़ेलिनका हाथ पकड़ लिया।

बरसोंसे खोई हुई अपनी निधि पाकर रोज़ेलिन पागल हो उठी। क्रोपेटकी आँखोंमें अपनी आँखें गढ़ाये रखकर उसने लड़खड़ाती हुई आवाज़में पूछा—"क्रोपेट ! यह क्या ?"

क्रोपेट कोई जवाब नहीं दे सका। रोज़ेलिनका कोमल हाथ ऊपर उठाकर, उसे बड़े स्नेहसे चूमते हुए, उसने जल्दी जल्दी केवल इतना ही कहा—"प्राणप्यारी रोज ! बिदाई ! सदाके लिये बिदाई !"

इतना कहते ही क्रोपेट रोजका हाथ छोड़कर बाहरकी तरफ़ भाग खड़ा हुआ। रोज़ेलिन और भी अधिक अचम्भेमें आ गई। क्रोपेटके

पीछे पीछे शीघ्रतासे बंगलेके बाहर आकर उसने ऊँचे स्वरमें पुकारा—"क्रोपेट ! प्रियतम क्रोपेट !"

परन्तु रोज़ेलिनकी चीखती हुई करुण पुकारोंका किसीने उत्तर नहीं दिया। उसे केवल इतना ही दिखाई दिया कि चाँदनीसे ढके हुए बगीचेमेंसे होकर क्रोपेट फाटककी तरफ़ भागा जा रहा है।

रोज़ेलिन बेचारी समझ नहीं सकी कि यह मामला क्या है। वह बड़ी निराशा और दुखसे दूरपर भागी जा रही, क्रोपेटकी उस अस्पष्ट मूर्तिकी ओर देखने लगी। इसी समय उसे अपने फाटक परसे पिस्तौल छूटनेकी ऊँची आवाज़ सुनाई दी। रोज़ बिल्कुल घबरा गई। वह भयभीत होकर चिल्लाई—"पापा ! पापा !"

बंगलेमेंसे श्वेत दाढ़ीवाली एक भव्य मूर्ति बाहर निकली। रोज़ेलिनके कन्धोंपर अपना शुभ्र हाथ रख कर उसने पूछा—"रोज़, क्या है ?"

रोज़ अधीर होकर रोने लगी। उसने कोई जवाब नहीं दिया।

इस समय तक पिस्तौल छूटनेकी आवाज़ सुन कर मो० लीमैनके बहुतसे नौकर भी वहाँ पहुँच गये थे। लैम्प लेकर वे फाटकके आसपासका स्थान ढूँढ़ने लगे। परन्तु दो एक खाली कार्तूसोंके अतिरिक्त वे वहाँसे कुछ पा नहीं सके।

रोज़ेलिन, अभागी रोज़ेलिन, अपने वृद्ध पिताका हाथ पकड़े हुए अन्दर चली गई।

(८)

रूसी क्रान्तिकारी दल भयंकर था। उसके कारनामे और भी अधिक भयंकर थे, परन्तु उसका कोर्ट मार्शल सबसे अधिक भयंकर था। आज दलके इसी मार्शल कोर्टके सम्मुख अभियुक्तके स्थानपर स्वयं क्रोपेट उपस्थित था। उसके दोनों हाथ पीछेकी तरफ़ बँधे हुए थे। उसका सिर लाल

रूमालसे लपेट दिया गया था। मुख्य न्यायाधीशके स्थानपर सरपञ्च बैठा था और जूरीके स्थानपर अन्य सब नायक।

यह अभियोग भी एक विचित्र अभियोग था। न्यायाधीश और जूरी सब एक स्वरसे अभियुक्तको निरपराध बता रहे थे—परन्तु अभियुक्त अपनेको अपराधी कहता था। बहुत देरके वादविवादके बाद स्वयं क्रोपेट-ने ही संघके मुखियाओंको, इस प्रकार कोर्ट मार्शलकी प्रथा पूरी करनेके लिये बाधित किया था।

मार्शल कोर्टमें पूरा मातम छाया हुआ था। अभियोग तो कुछ था ही। जज और जूरी सब अभियुक्तके हाथकी कठपुतली बने हुए थे। वह जैसा कहता था—सब लोग बाधित होकर वही करते थे।

अन्तमें अभियुक्तने न्यायाधीशको आदेश दिया—"मैंने अवसर पाकर भी संघकी आज्ञाका पालन नहीं किया। संघका पवित्र नियन्त्रण मैंने जान बूझकर तोड़ा है, अतः मुझे प्राणदण्ड दीजिये। मैं तैयार हूँ।"

सरपञ्च कुछ नहीं बोला। वह आँखोंपर रूमाल रखकर न जाने क्या सोच रहा था। थोड़ी देरके बाद, इस सन्नाटेको तोड़ते हुए, धीरे धीरे सरपञ्चने केवल इतना ही कहा—"क्रोपेट! उस दिन तुम्हें संघमें प्रविष्ट करते हुए, यदि मै तुम्हारे साथ वह रियायत करनेकी भूल न करता तो शायद आज यह बुरा दिन न देखना पड़ता। इस लिये अभियुक्तके साथ ही साथ मैं भी अपनेको अपराधी घोषित करता हूँ।"

अगले ही क्षण दो बार पिस्तौल छूटनेकी भयंकर आवाज़ हुई। क्रोपेट और सरपञ्च दोनोंकी वीर आत्माएँ एक साथ स्वर्गकी ओर कूच कर गईं। सरपञ्चने क्रोपेटका अपराध और अपनी भूल—दोनोंका एक साथ प्रायश्चित्त कर लिया।

पगली

-:o:-

(१)

मशहूर है कि गरमियोंके दिनोंमें कभी एक गंजा मनुष्य धूपसे परेशान होकर तालके एक पेड़के नीचे गया। वहाँ बैठकर वह अभी आरामसे दो-चार श्वास भी न लेने पाया था कि अचानक पेड़-परसे एक पका हुआ ताल ठीक उसकी खोपड़ीपर गिरा—बेचारेकी खोपड़ी खूनसे भीग गई। अभागी फ़ातिमा सचमुच इसी मसलका शिकार हुई। अरबके सैयद खानदानमें उसका जन्म हुआ था। उसका पति एक अच्छे स्वभावका, कुलीन और हृष्टपुष्ट नवयुवक था। धनकी भी उसके परिवारमें कोई कमी न थी, परन्तु वह स्वभावसे कुछ सनकी था। विदेश-यात्राकी धुन उसपर बचपनसे ही सवार थी। माँ-बापसे आज़ाद होते ही वह फ़ातिमाको लेकर ईरानके रास्ते अफगानिस्तान होते हुए हिन्दुस्तान चला आया। यहाँ आकर भी उसे चैन न मिली। बादशाहकी फ़ौजमें एक उच्च स्थान प्राप्तकर और थोड़े ही समयमें बादशाहकी कृपा-दृष्टि पाकर भी वह दिल्ली छोड़कर बंगाल चला गया। बंगालमें उन दिनों नवाब अमीरअली शाह हुकूमत करता था। फ़ातिमाका पति इसी नवाबकी फ़ौजमें भर्ती हो गया, परन्तु थोड़े ही दिनोंमें वह एक लड़ाईमें अचानक गोली खाकर मर गया।

अपनी जन्म-भूमिसे हज़ारों मील दूर एक बिलकुल अपरिचित देशमें आकर अकस्मात् फ़ातिमाका सर्वस्व लुट गया। वह अब सर्वथा निस्सहाय हो गई। उसकी गोदमें इस समय छः मासका क़ासिम नामक बच्चा भी

था। घावपर नमक यह कि मुर्शिदाबादके शाही महलोंके निकट रहनेके कारण उस अनिन्द्यसुन्दरी फ़ातिमापर बद्चलन नवाबकी वासनापूर्ण कुदृष्टि पड़ गई। फ़ातिमाके पतिकी मृत्युका समाचार राजधानीमें पहुँचते ही फ़ातिमाको आश्वासन देनेके बहानेसे इसके निवास-स्थानपर पहुँचकर नवाब अमीरअली शाहने जो कुत्सित हाव-भाव प्रदर्शित किये, उनसे वह अरबी भद्र महिला बहुत अधिक भयभीत हुई। नवाबके स्वभावसे परिचित बहुतसे लोगोंका तो यहाँ तक विश्वास था कि युद्धक्षेत्रमें फ़ातिमाके पतिकी मृत्यु, दुश्मनकी गोलीद्वारा नहीं, बल्कि नवाबकी गुप्त प्रेरणासे ही गई है। इस बातकी भनक मिलते ही फ़ातिमाने उसी रातको लुक-छिपकर मुर्शिदाबाद छोड़ दिया।

मुर्शिदाबाद छोड़ देनेपर भी अभाग्यने फ़ातिमाका साथ न छोड़ा। पाँच-सात दिन तक नन्हेंसे कासिमको गोदमें लिये हुए वह पागलोंकी तरह बंगालके हरे-भरे गाँवोंमें भटकती फिरी। वह भीख नहीं माँगती थी, उसे यह काम आता ही न था। यदि उसे कोई कुछ खानेको देता, तो वह चुप-चाप ले लेती, देनेवालेको धन्यवाद तक भी न देती थी। कुछ दिनों तक इसी तरह निरुद्देश्य भटकते रहनेके अनन्तर वह एक साँझको वीरपुर गाँवमें पहुँची। आबादीकी दृष्टिसे वीरपुर एक ख़ासे क़सबेके समान था। इसके अधिकांश निवासी हिन्दू थे, परन्तु अब फ़ातिमाकी दृष्टिमें हिन्दू-मुसलमान दोनों एक समान थे। रातके समय फ़ातिमाने जिस हिन्दू परिवारमें आश्रय ग्रहण किया, उस परिवारके स्वामीने उसके साथ माताके समान व्यवहार किया। फ़ातिमा खूब निश्चिन्त होकर सो गई। यहाँ तक तो सब ठीक था; परन्तु आधीरातके समय जब सम्पूर्ण ग्रामवासी निश्चिन्त होकर सोये हुए थे, अचानक गाँवके उसी मुहल्लेमें, जहाँ फ़ातिमा ठहरी हुई थी, आग लग गई। फूँस और सरकण्डोंके

प्रयोगकी अधिकताके कारण आग एक साथ फैलने लगी। सारा गाँव जाग उठा। तेज़ लपटोंकी प्रचण्ड भों-भों ध्वनिके साथ ही स्त्री और बच्चोंकी चिल्लाहटने आधीरातके शान्त कालमें एक विचित्र और भयानक दृश्य उत्पन्न कर दिया।

इस गाँवके ज़मीन्दार एक वृद्ध ब्राह्मण थे। गाँवके बाहर एक छोटेसे बग़ीचेमें उनका घर था। गाँवसे "आग! आग!" का ऊँचा शोर सुनकर वृद्ध ब्राह्मण जाग उठे। गाँवके ऊपर अग्निकी प्रचण्ड लपटें देखकर घबड़ाई हुई आवाज़में उन्होंने पुकारा—"हरिहर! हरिहर!" हरिहर उनकी एकमात्र सन्तान था। इस तेजस्वी और प्रतिभाशाली बालककी आयु अभी केवल १२ बरसकी ही थी। हरिहर अपने नामकी पुकार सुनकर "क्या है पिताजी?" कहकर जाग उठा। परन्तु अपने प्रश्नका उत्तर उसे अपने पितासे सुननेकी आवश्यकता न रही। वह एक क्षण भी विलम्ब न करके अग्निकाण्डकी ओर भाग खड़ा हुआ। वृद्ध महोदयके निषेधकी उसने कोई परवाह नहीं की।

(२)

गाँवमें पहुँचते ही हरिहरको सबसे पूर्व जो कुछ दिखाई दिया, उसे देखकर उसका दयापूर्ण हृदय ज़ोरसे रो उठा। उसने देखा कि ५०—६० मनुष्योंकी भीड़में एक अपरिचित—परन्तु भद्र महिला चिल्ला-चिल्लाकर रो रही है। उसे गाँवके दो आदमियोंने पकड़ रक्खा है, इस अवस्थामें भी वह धधकती हुई आगमें घुसनेके लिये हाथ-पैर मार रही है। उसकी चिल्लाहटमेंसे कुछ भी समझ सकना आसान नहीं था, इसलिये हरिहरने पास ही खड़े हुए एक आदमीका नाम लेकर पूछा—"क्यों बेचू, माजरा क्या है?"

बेचू एक नौजवान किसान था। अभी तक उसकी नज़र अपने मालिकके पुत्रपर नहीं पड़ी थी। हरिहरकी आवाज़ सुनते ही उसे नम्रतापूर्वक प्रणाम करके बेचूने कहा—"मालिक, यह परदेशी भिखा-रिन कल साँझको आकर हलधरके घरमें ठहरी थी। इस अग्निकाण्डमें हड़बड़ाकर निकलते हुए इसका छोटासा बच्चा हलधरके घरके आंगनमें गिर पड़ा। जल्दीमें हलधर इसके बच्चेको ढूँढे बिना ही इसे वहाँसे बाहर खींच ले आया। अब यह अभागिनी अपने बच्चेके लिये ही रो रही है। यह तो आप जानते ही हैं कि हलधरके घरका आँगन चारों ओरसे कमरोंसे घिरा हुआ है और इन कमरोंकी छतें भयानकरूपमें जल रही हैं। ख़ासकर दरवाज़ेके पास जानवरोंके लिये जो छप्पर पड़ा हुआ था, वह तो बड़े ही भयंकररूपमें जल रहा है।"

बेचूकी बात सुनकर हरिहरको सारा मामला समझनेमें देर न लगी। पासके एक मकानको आगसे बचानेके लिये कुछ लोग उसपर पानी डाल रहे थे। इनमेंसे एक आदमीका घड़ा लेकर हरिहरने अपने ऊपर उलट लिया। इसके बाद कुछ भी कहे-सुने बिना वह तीरकी तेज़ीसे हलधरके जलते हुए मकानमें प्रविष्ट हो गया। गाँवके सब लोगोंमें मृत्युके समान सन्नाटा छा गया। सब लोग हतबुद्धिसे खड़े रह गये। यहाँ तक कि अभागिनी फ़ातिमाका आस्मानको दहला देनेवाला करुण-क्रन्दन भी थोड़ी देरके लिये शान्त हो गया। जो लोग आग बुझानेका कार्य कर रहे थे, वे भी दमभरके लिये रुक गये। जिस प्रकार खिली चाँदनीमें कभी-कभी कोई तारा टूटकर अपनी चमकसे चाँदके प्रकाशको भी मात कर देता है और लोग सौ काम छोड़कर उसकी तरफ़ देखने लगते हैं, उसीप्रकार हरिहरके इस अग्नि-प्रवेशके सम्मुख यह भयंकर अग्निकाण्ड भी लोगोंको कुछ देरके लिये फीका जान पड़ा।

ठीक इसी समय हरिहरके वृद्ध पिताने घटनास्थलमें प्रवेश किया। वहाँ पहुँचते ही आगके धुँधुले प्रकाशमें उन्होंने भीड़मेंसे हरिहरको ढूँढ़ना शुरू किया, परन्तु हरिहरके कहीं दिखाई न देनेपर वह व्याकुल हो उठे। उन्होंने चीखती हुई आवाज़में पुकारा—"हरिहर! हरिहर!"

फ़ातिमा अभी तक सहमी हुई बैठी थी। अब इस बूढ़े ज़मीन्दारको 'हरिहर, हरिहर' पुकारते हुए सुनकर उसके हृदयका दुःख फिरसे उमड पड़ा। उसने समझा, शायद मेरी तरह ही इस बूढ़ेका बच्चा भी आगमें ही रह गया है। वह भी अत्यन्त करुण स्वरमें चिल्ला उठी—"कासिम! कासिम!"

इसी वक्त स्वयं हलधरने आकर अपने मालिकसे हरिहरके साहसकी सम्पूर्ण कहानी कह सुनाई। वृद्ध ब्राह्मण यह समाचार सहन नहीं कर सका, वह वहीं बेहोश होकर गिर पड़ा। उसे गिरता हुआ देखकर फ़ातिमा समझी कि इसका पुत्र आगमें जल मरा है। वह अपने कासिमसे भी अब पूरी तरह निराश होकर बेहोश हो गई।

हलधरके घरके फाटकमेंसे बड़ी मात्रामें गहरे, काले और नीले रंगका धुआँ निकल रहा था। गाँवके सब लोग किंकर्तव्यविमूढ़ होकर इसी धुएँकी तरफ़ देखते थे। अभी पाँच-चार मिनट भी न बीते होंगे कि फाटकमेंसे धुएँके साथ-ही-साथ नवयुवक हरिहर अस्पष्टरूपमें बाहर निकलता हुआ दिखाई दिया। अगले ही क्षण लोगोंने स्पष्टरूपसे देखा कि हरिहर धुएँसे निकलकर गलीमें आ गया है। परन्तु लोग अभी प्रसन्नतामें भरकर चिल्लाने भी न पाये थे कि हरिहर गलीमें ही बेहोश होकर गिर पड़ा! मालूम होता है, धुएँसे उसका दम घुट रहा था। गलीके दोनों ओरके मकान जल रहे थे, उसमें घुसना भी आसान नहीं था, परन्तु हरिहरको अपनी आँखोंके सामने मृत्युके मुँहमें पड़ा देखकर ग्रामीण नवयुवकोंका

उत्साह भी जाग उठा। अनेक किसान जानपर खेलकर गलीमें घुस गये। बड़ी शीघ्रतासे हरिहरको आगसे दूर एक सुरक्षित स्थानपर ले आया गया। उसकी छातीपरसे कपड़ा हटाकर बालक कासिमको लोग उसकी माताके पास ले गये। कपड़ोंका व्यवधान होनेके कारण कासिम अभी तक बेहोश न हुआ था। मालूम होता है, वह बहुत देरसे रो रहा था। रोते रोते उसका गला बैठ गया था। लोगोंने ज्यों ही कासिमको फ़ातिमाकी छातीपर रक्खा, त्यों ही वह सचेत हो उठ बैठी। पुत्रके उष्ण प्रेमके स्पर्शसे माताके हृदयको कल्पनातीत ठंडक प्राप्त हुई। थोड़ी ही देरमें वृद्ध ब्राह्मण और हरिहर दोनों ही स्वस्थ हो गये।

अगले ही दिन फ़ातिमाने अपने प्राणाधिक कासिमको किशोर हरिहरके चरणोंपर रखकर कहा—"सम्पूर्ण जीवनके लिये मैं अपने जीवनाधारको तुम्हारे चरणोंमें अर्पित करती हूँ। इस बालककी नसोंमें हज़रत मुहम्मदकी नसोंका पवित्र खून बह रहा है। इसके पिताने अपने सम्पूर्ण जीवनमें जानकी अपेक्षा कर्त्तव्यको अधिक प्यारा समझा है। खुदा इसे ऐसी बरकत दे, जिससे कि यह इस ज़िन्दगीमें तुम्हारे एहसानका थोड़ा बहुत बदला तुम्हें दे सके।"

इस दिनके बादसे फ़ातिमा वीरपुरमें ही रहने लगी।

(३)

बाईस बरस बाद

सन् १७१९ का वर्ष बंगालके लिये सचमुच यमराजका वर्ष था। बंगालका नवाब अमीरअली शाह बड़ा ही लम्पट, क्रूर, अत्याचारी और बेवकूफ़ नवाब था। उसके कुप्रबन्धसे सम्पूर्ण प्रान्तमें दरिद्रता बढ़ रही

थी। नवाबके शासन-कालके पहले पन्द्रह-सोलह बरस इसी तरह बीते, पीछेसे प्रजाके बढ़ते हुए असन्तोषसे बचनेके लिये अमीरअली शाहने धर्मभक्तिका आश्रय लिया। वह अपने दरबारमें मौलवी-मुल्लाओंका खूब आदर-सत्कार करने लगा। हिन्दुओंपर अत्याचार होने शुरू हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि राज्यमें अव्यवस्था और ग़रीबी बढ़ जानेपर भी उसका सम्पूर्ण दुष्परिणाम अकेले हिन्दुओंको ही उठाना पड़ा। इससे कृषिको भारी हानि पहुँची। सन् १७१९ का दुष्काल इन्हीं परिस्थिति-योंका परिणाम था। इन अव्यवस्थाके दिनोंमें भी पं० हरिहर शर्माने अपनी ज़मींदारीमें पूर्ण व्यवस्था क़ायम रक्खी। वीरपूरके अतिरिक्त अन्य दस-बारह गावोंके भी वही ज़मींदार थे। अपने पिताकी मृत्युके बाद पं० हरिहर शर्माने अपनी ज़मीन्दारीके कृषकोंकी आर्थिक दशा सुधारनेका बहुत प्रयत्न किया, तथापि वह सन् १७१९ के इस भयंकर अकालसे अपनी रैयतको बचा न सके। इन अकालके दिनोंमें पं० हरिहर शर्मा अपनी रैयतको 'देवीकी भिक्षा' के नामपर मुफ्त चावल बाँटने लगे। नवयुवक कासिम उनका मुख्य कारिन्दा था। वह इन दिनों पण्डितजीकी जमींदारीके ग्रामोंमें घूम-फिरकर पीड़ितोंकी सहायता किया करता था।

इसी वर्षकी वसन्तऋतुके प्रातःकाल पं० हरिहर शर्मा देवीके मन्दिरके सामनेवाले फ़र्शपर खड़े थे। अभी-अभी उन्होंने सैकड़ों भिक्षुकोंको देवीकी भिक्षा अपने हाथसे बाँटनेका कार्य समाप्त किया था। इसी समय कासिम वहाँ आ पहुँचा। उसने देखा कि पण्डितजी आज कुछ उदास प्रतीत होते हैं। आजसे पहले उसने हरिहर शर्माको कभी उदास या निराश न देखा था। खासकर इस पुण्य-कार्यके बाद तो उनके सुन्दर मुखपर सदैव सरल मुसकराहट दिखाई दिया करती थी। कासिमने

अनुमान किया कि शायद उनकी उदासीका कारण उनकी रैयतका बढ़ता हुआ कष्ट हो। उसने पास आकर पुकारा—"काका!"

हरिहर शर्मा अन्यमनस्क-से होकर रिक्त दृष्टिसे नीचेकी ओर देख रहे थे। भाईसे भी प्रिय कासिमकी अचानक आवाज़ सुनकर वह चौंक उठे। मन्दिरके फ़र्शसे नीचे उतरकर उसके समीप आकर उन्होंने पूछा—'क्या है कासिम?"

कासिमने कहा—"आज उदास क्यों हो?"

"नहीं तो"—कहकर पण्डित हरिहर शर्मा ज़रा मुसकरा दिये, परन्तु ठीक उसी समय उनकी आँखोंने उन्हें धोखा दिया। उनसे दो बूँद आँसू टपककर उनको कपोलोंके भिगोते हुए नीचेकी ओर लुढ़क गये। इन आँसुओंने पण्डितजीकी 'नहीं तो' का सीधा प्रतिवाद कर दिया।

कासिमका दिल मसोस उठा। पण्डितजीके कंधेपर अपना हाथ रखते हुए उसने बड़े प्रेमसे कहा—"काका! तुम भी रोओगे, तो फिर इन हज़ारों लोगोंको ढाढ़स बँधानेवाला कौन रहेगा?"

पण्डितजीने जवाब दिया—"भाई कासिम, मैं अपने लिये नहीं रोता।"

पण्डितजीके इस उत्तरसे कासिमको विश्वास हो गया कि उनकी उदासीका कारण उनकी प्रजाके बढ़ते हुए कष्टको छोड़कर और कुछ नहीं है, अतः कासिमने मुसकराते हुए कहा—"औरोंके लिये मुझे रोने दो। इस कष्टका सारा बोझ मुझपर डालकर तुम हलके हो जाओ।"

पंडितजी हँसे नहीं। उन्होंने कहा—"क़ासिम, तुमने मेरा मतलब नहीं समझा।"

कासिमने गम्भीर होकर पूछा—" तो फिर ?"

पंडितजीने उत्तर दिया—" भाई ! मालूम होता है कि मैं अब तुमसे शीघ्र ही जुदा कर दिया जाऊँगा।"

कासिमपर मानो किसीने सहसा तमंचेका वार कर दिया। बहुत ही विचलित होकर अपने दोनों हाथ काकाके गलेमें डालते हुए उसने कहा—" यह कैसे, काका ! " पंडितजीको अपनी बाहुओंमें जकड़कर वह मानो कह रहा था—हम दोनोंको अलग कर ही कौन सकता है।

पंडितजीने उत्तर दिया—" नवाबने परसों मुझे अपने दरबारमें हाज़िर होनेका हुक्म दिया है। आज प्रातःकाल ही उसका आदमी मुझे परवाना—"

कासिमने बीचमें ही टोककर कहा—" सम्भवतः नवाब आपसे कोई सलाह-मशविरा ही करना चाहता होगा।"

पं० हरिहर शर्माने कहा—" नहीं, यह बात नहीं है, कासिम ! मेरे बुलानेका कारण भी उस चिट्ठीमें साफ़ साफ़ लिखा हुआ है। मुझ-पर यह इलज़ाम लगाया गया है कि मैं दीनदार मुसलमानोंको ज़बरदस्ती काफ़िर बनाता हूँ। अपने इलाकेकी दो मस्जिदोंको जान-बूझकर मैंने तुड़वा दिया है।"

कासिम गरम हो उठा। वह बड़बड़ाया—" उस बेईमानकी इतनी मजाल ! नवाब क्या बना है, मानो खुदा भी उसका गुलाम है। शैतान कहींका !"

पण्डितजीने कहा—" शान्त रहो कासिम। क्रोध करनेसे क्या बनेगा ?"

थोड़ी देर तक चुप रहनेके बाद कासिमने उत्तेजित होकर कहा—

"काका, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा।" शायद वह दिलमें नवाबसे कुश्ती लड़नेके मनसूबे बाँध रहा था।

परन्तु पंडितजीने आज्ञाके ढंगपर उत्तर दिया—"नहीं, तुम मेरे साथ न जा सकोगे। तुम भी यदि मुर्शिदाबाद ही चलोगे, तो यहाँकी देख-भाल कौन करेगा?"

कासिम उदास होकर चुप हो गया। पंडितजीने देखा कि उसकी बालकोंके समान पवित्र आँखोंमें आँसू भरे हुए हैं। उनके मुँहसे सहसा निकल गया—"हे भगवान! तेरी सृष्टिमें इतनी विषमता क्यों है?"

(४)

"मैं इन काफ़िरोंको सूअरसे भी नापाक समझता हूँ"—शराब पीकर बदमस्त हुए एक दरबारीने नवाब अमीरअली शाहसे कहा।

एक और मौलवीने हँसकर जवाब दिया—"तब तो इन काफ़िरोंको मारना हराम समझा जायगा।" इसपर खूब कहकहा पड़ा। नवाबने कहा—"खूब, खूब!"

इसी समय वज़ीरने कहा—"शाहन्शाह, वीरपुरके काफ़िरोंका सर-दार, वह बिरहमन, अभी तक क्यों नहीं आया?"

अमीरअलीने बड़े सन्तोषके साथ—"वह आज वक्तपर हाज़िर न हो, तब तो और भी अधिक अच्छा है। हमें कोई झंझट ही न करना पड़ेगा।"

वज़ीरने कहा—"इस काफ़िरके बाप-दादाको जहाँपनाहके दाहिनी ओर कुर्सी दी जाती थी; हुज़ूर यदि आज उसे इस फ़र्शके नीचे जूति-योंपर ही खड़ा रहनेके हुक्म दें, तो बहुत अच्छा हो।"

नवाबने कहा—"बहुत ठीक।"

ठीक इसी समय पण्डित हरिहर शर्माने अपने दो सेवकोंके साथ दरबारमें प्रवेश किया। वे एक रेशमी धोती और दुपट्टेको छोड़कर अन्य कोई वस्त्र नहीं पहने थे। उनके पैरोंमें खड़ाऊँ पड़ी हुई थीं। अपने जनेऊको उन्होंने ठीक उसी तरह कानपर चढ़ा रक्खा था, जिस तरह पेशाब जाते हुए चढ़ाया जाता है। मालूम होता है, वह पहलेसे ही नवाबसे पूरी तरह लड़ाई करनेके लिये तय्यार होकर आए थे। उनके माथेपर एक बड़ासा तिलक लगा हुआ था।

पंडितजीके दरबारमें पहुँचते ही दरबारियोंमें सन्नाटा छा गया। सब दरबारी कौतूहलके साथ उनके इस विचित्र स्वरूपकी ओर देखने लगे। पंडित हरिहर शर्मा जब चबूतरेकी सीढ़ियोंपर चढ़ने लगे, तब एक चोबदारने आकर उन्हें वहीं खड़े रहनेका हुक्म सुनाया। पंडितजीने बड़ी तीक्ष्ण दृष्टिसे उस चोबदारकी ओर देखा। वह सहम गया। पंडितजी खड़ाऊँ तक बिना उतारे, नवाबके ठीक सामने जा खड़े हुए। यह देखकर वज़ीरके क्रोध और विस्मयका ठिकाना न रहा। पंडितजीसे इसका बदला लेनेके लिये उसे खुजली उत्पन्न होने लगी; परन्तु स्वयं नवाबको भी आश्चर्यसे पंडितजीकी ओर ताकते हुए देखकर उसकी कुछ कहनेकी हिम्मत न हुई।

पंडितजीने नवाबसे सलाम प्रणाम आदि कुछ नहीं कहा। फर्शपर ठीक सीधा समकोण बनाते हुए वह नवाबके सामने जाकर खड़े हो गये। एक बार चारों ओर दृष्टि फेरकर उन्होंने कड़ी आवाज़में वज़ीरसे पूछा—

"मेरे लिये कुर्सी कहाँ है?"

नवाब अमीरअली शाहने आज तक कभी ऐसा नज़ारा न देखा था। वह विस्मयसे आँखें फाड़-फाड़कर हिन्दुस्तानके इस 'ब्राह्मण' नामक विचित्र जीवको देख रहा था। अन्य दरबारियोंने भी जब देखा कि पंडि-

तजीने खड़ाऊँ फटकारते हुए आकर सीधा वज़ीरको डाँटना शुरू किया है, तब उनकी हँसी न रुकी।

इसी समय वज़ीरने पंडितजीसे कहा—" तुम्हारा स्थान इस फ़र्शके नीचे है।"

पंडितजीने बड़े क्रोधसे डपट कर कहा—" चुप रहो, नीच! अधर्मी!"

दरबारियोंके लिये हँसी रोकना कठिन हो गया, वे खाँस-खाँसकर हँसी रोकने लगे।

वज़ीर अपना यह तीव्र अपमान सहन न कर पंडितजीको सज़ा देनेके लिये नीचे उतरने ही वाला था कि नवाबने उसे ऐसा करनेसे रोका।

पण्डितजी और अधिक देरतक प्रतीक्षा न कर सके। वह अपना रेशमी दुपट्टा फ़र्शपर डालकर उसीपर बैठ गये।

अब नवाबने कहा—" खड़े होकर मेरे सवालोंका जवाब दो।"

पण्डितजीने बड़ी शान्तिसे उत्तर दिया—" पहले मेरे लिये कुर्सी मँगवा दो, तब तुम्हारे प्रश्नोंका उत्तर दूँगा।"

पण्डितजीका यह उत्तर सुनकर नवाबको भी क्रोध आ गया। वह दो एक मिनट तक पण्डितजीकी ओर ठीक उसी तरह देखता रहा, जिस तरह शिकारी जीव अपने आखेटकी ओर ताका करते हैं। इसके बाद उसने गरजकर कहा—" खड़े होते हो या नहीं?"

परन्तु इस समय तक पण्डितजीने एक और कार्य आरम्भ कर दिया था। वह धीरे-धीरे आँखें बन्द करके गीताके श्लोकोंका पाठ कर रहे थे। नवाबकी बातको मानो उन्होंने सुना ही नहीं। दरबारियोंकी हँसी गुम हो गई, वे चकित और स्तम्भित होकर इस अभूतपूर्व दृश्यकी ओर देखने लगे।

इसी समय वज़ीरने नवाबसे कहा—"इस काफ़िरको यहींपर कोड़ोंसे पिटवाइये।"

अब पण्डितजीका ध्यान इस दुनियासे बहुत ऊपर उठ चुका था। भारतवर्षकी निर्भीक ब्रह्म-शक्तिका वह पुञ्जस्वरूप हरिहर शर्मा अब गीताके पाठमें मग्न होकर इस मानापमानके आडम्बरसे बहुत ऊपर उठ गया था।

नवावने अपने पाशविक क्रोधको चरितार्थ करनेकी इच्छासे पं० हरिहर शर्माके इस भौतिक शरीरका अपमान करनेके लिये चार दरबारियोंको उन्हें बिलकुल नंगा कर डालनेका हुक्म दिया, परन्तु वह मूर्ख था। जब दरबारियोंने पण्डितजीके पवित्र शरीरको स्पर्श किया, तब तक उनका शरीर प्राण-शून्य हो चुका था! पण्डितजी कोई तीव्र विष पीकर दरबारमें आये थे।

(५)

पण्डित हरिहर शर्मा जब अपने गाँवसे मुर्शिदाबादकी ओर चले थे, तब कासिम उन्हें कुछ दूर तक पहुँचाने आया था। बिदा होते समय पण्डितजीने उसे छातीसे लगाकर दो-चार उपदेश दिये थे। अन्तमें पण्डितजीकी आज्ञासे कासिम उनसे जुदा हुआ था। जुदाईके समय पण्डितजीकी आँखोंमें नीरव आँसू ही थे, परन्तु कासिम तो बच्चोंकी तरहसे फूट-फूट कर रो रहा था।

घर लौटकर कासिमने बूढ़ी फ़ातिमासे काकाके मुर्शिदाबाद जानेका विस्तृत हाल सुनाकर कहा—"अम्मा, मुझे उम्मेद नहीं कि अब इस ज़िन्दगीमें काकाके दर्शन फिर कभी नसीब हों। मालूम नहीं, मेरे इतना कहनेपर भी काका मुझे अपने साथ मुर्शिदाबाद क्यों नहीं ले गये। उनकी बात मानना अपना धरम समझकर मैं यहाँ वापिस तो लौट आया

हूँ, परन्तु मेरा दिल कह रहा है कि मेरा यहाँ रह जाना अच्छा नहीं हुआ। अम्मा, मुझे बताओ कि इस हालतमें मैं क्या करूँ ?"

बूढ़ी, अरब-महिला फ़ातिमा अपने प्राणोंके एक मात्र अवलम्ब कासिमकी बात बड़े ध्यानसे सुन रही थी। बात सुनते हुए कासिमके मुखकी ओर वह एक विचित्र दृष्टिसे देख रही थी। उस दृष्टिमें पागलपनकी कुछ अजीब झलक थी। इसके द्वारा शायद वह अपने इस सन्देहका उत्तर कासिमके चेहरेपरसे खोज रही थी कि कहीं मेरा बहादुर कासिम मौतसे तो नहीं डरता। कासिमकी अन्तिम बात सुनकर उसे अपने सन्देहका सन्तोष-जनक उत्तर स्वयं प्राप्त हो गया। उसने कासिमके प्रश्नका उत्तर देनेमें एक क्षणका भी विलम्ब न किया। फ़ातिमाने बड़े स्थिर स्वरमें कहा—"बेटा! जाओ, इसी वक्त तुम मेरा आशीर्वाद लेकर मुर्शिदाबाद जाओ। मैं तुम्हें यह आज्ञा दे रही हूँ, इस लिये अपने काकाकी बात टालनेका पाप तुमपर नहीं आयेगा। प्यारे कासिम! तुमने मेरा दूध पीया है। उस दूधको कलंकित मत करना। एक दिन तुम्हारे काका, तुम्हें ढूँढ़नेके लिये जलती हुई ज्वालाओंमें घुसे थे; मुझे पूरा यकीन है कि यदि वह उस दिन आगमेंसे तुम्हें न ढूँढ़ पाते तो उसमेंसे ज़िन्दा बाहर निकलना वह कभी पसन्द न करते। बेटा कासिम, तुम भी आज ठीक उन्हींकी तरह अपने काकाको सकुशल वापिस लौटा लानेके लिये मुर्शिदाबाद जाओ। यदि तुम उन्हें वापिस ला सको, तो उनके साथ लौटकर ही मुझे अपना मुँह दिखाना।"

बूढ़ी फ़ातिमा इतना कहकर चुप हो गई। ये बातें कहते-कहते जोशके कारण उसकी आवाज़ काँपने लगी थी।

कासिम उसी समय अपनी माताके पैर छूकर मुर्शिदाबादके लिये प्रस्थान कर गया। जब तक कासिम दिखाई देता रहा, तब तक फ़ाति-

माकी आँखोंसे एक बूँद पानी भी न गिरा; परन्तु ज्यों ही कासिम उसकी आँखोंसे ओझल हो गया, त्यों ही बूढ़ी फ़ातिमा 'देवी'से 'माता' बन गई— उसकी आँखोंसे आँसुओंका एक सोता फूट पड़ा। शायद कासिम ही फ़ातिमाका 'बल' था, उसके आँखोंसे ओझल होते ही वह 'निर्बल' बन गई! बूढ़ी फ़ातिमाके इस दर्दको केवल वे राजपूत माताएँ ही समझ सकती हैं, जो हँसती-हँसती अपने बेटोंको केसरिया बाना पहिनाकर लड़ाईमें भेजती थीं।

(६)

मुर्शिदाबादसे तीन मील दूर एक बरसाती नालेकी सूखी तलहटीमें रेतपर एक धधकती हुई चिता जल रही थी। चिताके आस-पास पूरी तरह सन्नाटा था, केवल अग्निकी बड़ी-बड़ी लपटें 'धू धू' ध्वनि करके आसमानको चाटनेका प्रयत्न कर रही थीं। रात अभी शुरू ही हुई थी। आसमानसे चतुर्दशीका चाँद सफ़ेद चाँदनी बरसा रहा था। नालेके पासवाले जंगलमें गीदड़ चिल्ला रहे थे। चिताके अन्दरसे बार-बार चिट-कनेकी आवाज़ इस निस्तब्धताको और भी भयंकर बना रही थी। इसी चिताके निकट बिलकुल अकेला खड़ा हुआ कासिम चिताकी ओर देखते रहकर गम्भीर चिन्तामें निमग्न था। मुर्शिदाबादके पाँच सात ब्राह्मण पं० हरिहर शर्माकी चिताको आग देकर शहरको वापिस लौट गये थे; परन्तु कासिम उनसे आँख बचाकर फिर चिताकी ओर लौट आया था।

कासिम एकटक स्थिर दृष्टिसे आँखोंमें आँसू भरकर इस चिताकी ओर देख रहा था। वह सोच रहा था—"इस बदचलन दुनियामें इस प्रकारके फरिश्ते खुदा क्योंकर पैदा कर देता है! यहाँ तो फरेबी और मक्कारी ही कामयाब होती है। शायद ऐसी पाक रूहोंको खुदा महज़ इसीलिये

पैदा करता हो कि ये लोग दुनियाके सितम और गुनाहोंको अपनी छातीपर झेलकर इस पापी संसारके पापोंका बोझ हलका किया करें।" फिर वह सोचने लगा—"एक दिन काकाने इसी प्रकारकी तेज़ ज्वालाओंमें, अपनी इच्छासे घुसकर मेरी रक्षा की थी। वह छाती, जिसपर चिपकाकर काका मुझे आगसे बाहर लाये थे, आज स्वयं आगमें भस्म हो रही है!"

इस अन्तिम भावने कासिमको उद्विग्न कर दिया, उसने सोचा—"काका मुझे बचानेमें कामयाब हुए थे, परन्तु मैं उन्हें बचा न सका। मुझे उन्होंने इसका अवसर ही नहीं लेने दिया! अब और कुछ कर सकूँ या न कर सकूँ, उनके साथ जान तो दे सकता हूँ।"

विचारधारा यहाँ आकर समाप्त हो गई। स्वर्गकी एक सच्ची और पवित्र किरण कासिम चितामें कूद पड़ा।—चिताके अन्दरसे मांस और मज्जाके चटखनेकी आवाज़ और भी अधिक तीक्ष्ण हो गई, परन्तु उसे सुननेवाला वहाँ कोई नहीं था!

× × × ×

सन् १७१९ के अकालके अगले ही साल एक पगली "बेटा कासिम! क्या काकाको ढूँढ़ लाया?" चिल्लाती हुई मुर्शिदाबादके आसपासके गाँवोंमें घूमा-फिरा करती थी। स्त्रियाँ उसे देखकर भयसे भाग जाती थीं, बच्चे उसपर धूल फेंकते थे, जवान उसकी हँसी उड़ाते थे, गाँवके आवारा गर्दोंने उसे अपनी उदासी मिटानेका साधन बना रक्खा था;—परन्तु जो थोड़ेसे लोग उस बूढ़ी फ़ातिमाकी सच्ची कहानी जानते थे, वे आँखोंमें आँसू भरकर उस 'पगली माता' के सम्मुख श्रद्धासे सिर झुकाया करते थे।

आँसू

—:०:—

(१)

स्वर्गलोक-भरमें बुद्धदेवता हँसी और मखौलके पात्र बने हुए थे। उनके छोटे क़द और चौड़े डील-डोलके कारण, जो देवता उन्हें देखता था, उनपर कोई न कोई आलोचना करनेके लोभका संवरण न कर सकता था। ख़ास कर देवराज इन्द्रकी सभामें उनके प्रवेश करते ही सदस्योंके हास्यका फ़व्वारा छूट पड़ता। जब वह सभामें प्रवेश करते, तब सारी सभा खिलखिला कर हँस उठती। प्रतिदिन देवराज इन्द्र स्वयं बुद्धसे विचित्र-विचित्र प्रश्न करके उन्हें खूब परेशान किया करते थे। इस प्रश्नोत्तरीमें तंग आकर जब बुद्ध खीझ उठते थे, तब उनका चेहरा और उनके हाव-भाव देखने योग्य हो जाते थे। देवताओंको बुद्धका यह खीझना बहुत ही पसन्द था; इन्द्र प्रायः उनकी इस इच्छाको पूरी किया करते थे।

बुद्ध शान्तस्वभाव चन्द्रके पुत्र थे। चन्द्रदेवको अपने एक मात्र पुत्रकी यह दशा बहुत अखरती थी, परन्तु वह लाचार थे। देवराज इन्द्रके सामने भला वह क्या कर सकते थे? इसलिए, वह मन मार कर चुपचाप अपने पुत्रके इस भयंकर अपमानको सहन कर लिया करते थे।

एक दिन देवराज इन्द्र मात्रासे अधिक सुरा-पान कर गये। प्यालेपर प्याला चढ़ाते-चढ़ाते वह बिलकुल ज्ञान-शून्य हो गये। इसी अवस्थामें उन्होंने सुरा-पात्रको उछाल कर दूर फेंक दिया। बुद्ध उनके सामने ही बैठे थे; देवराजने बड़े कर्कश स्वरमें उनसे कहा—"ओ बुद्धू! जा,

सुरा-पात्र उठा ला।" एक देवताको इस प्रकारकी आज्ञा देना उसका घोर अपमान करना था, अतः बुद्ध अपने स्थानसे नहीं हिले।

बुद्धके पिता चन्द्र भी पास ही बैठे थे, वह पुत्रका यह भयंकर अपमान न सह सके। उन्होंने बिगड़ कर कहा—"इन्द्र! होश सम्हाल कर बात करो।"

चन्द्रदेव जोशमें आ कर यह बात कह तो बैठे, परन्तु दूसरे ही क्षण अपने दुस्साहसके परिणामको सोच कर उनका हृदय काँप उठा। इतनेमें ही कुपित देवराजने गरज कर कहा—"क्या बकता है छोकरे! अभी पतित हो कर मर्त्य-लोकमें जन्म ले।" चन्द्रदेवके मुँहपर हवाइयाँ उड़ने लगीं। इतनी छोटी-सी अवज्ञाका इतना भयंकर दण्ड!

सारी सभामें सन्नाटा छा गया। सब देवता यह सुन कर काँप गये, परन्तु देवराजसे कुछ कहनेकी हिम्मत किसीको न हुई। केवल गुरु बृहस्पति ही इस अवस्थामें भी ज़रा न घबराये। उन्होंने खूब गम्भीर हो कर देवराज इन्द्रको उपदेश देना प्रारम्भ किया। बृहस्पतिकी बादलकी गरजके समान गम्भीर वाणीके प्रभावसे शीघ्र ही देवराजका नशा उतर गया। चेतनावस्थामें आ कर उन्हें अपने कार्यका अनौचित्य स्पष्ट दीखने लगा। थोड़ी देरमें खूब शान्त होकर उन्होंने कहा—"जाओ चन्द्रदेव, मेरा शाप नहीं टल सकेगा। मर्त्यलोकमें जाओ और वहाँकी सर्वोत्कृष्ट वस्तु लाकर मुझे दो। उस वस्तुमें स्वर्गलोककी मधुरता हो, पापियोंको कँपा देनेकी वह शक्ति रखती हो; वह सबसे अधिक करुणापूर्ण और पवित्र हो, वह आदर्श प्रेमका उज्ज्वल और मधुरतम स्वरूप हो। जाओ, चन्द्र, मर्त्यलोकमें जाकर मेरे लिए शीघ्र ही ऐसा उपहार ढूँढ़ लाओ।"

चन्द्रदेव अभीतक थर-थर काँप रहे थे।

(२)

खूब तपी हुई बालुकापर वह गौर-वर्ण देवदूत बिलकुल नंगा होकर बैठा था। गरम लू चल रही थी; कहीं हरियालीका नाम भी नहीं था। दूरपर श्यामल वर्णके कुछ वृक्ष अस्पष्ट रूपमें दिखाई पड़ रहे थे। देवदूत—निर्वासित देवदूत—इस दशामें अत्यन्त कष्ट अनुभव कर रहा था। जिस मर्त्यलोकको वह अपनी शुभ्र ज्योत्स्नासे प्रतिदिन शीतल किया करता था, वह लोक इतना गरम, नीरस और शून्य होगा, इसकी उसे कल्पना भी न थी। देवदूतका शरीर जल रहा था, उसमें मनुष्योंकी अपेक्षा बहुत अधिक सहनशक्ति थी, अतः ऊपर अनन्त नीले आकाशकी ओर आँखें किये हुए पड़ा रहा। शायद वह तृषित नेत्रोंसे स्वर्गकी ओर ताक रहा था।

सहसा देवदूतको अपना कर्तव्य याद आया; वह एकदम उठ खड़ा हुआ। वह सोचने लगा कि इस नीरस-निर्जन मर्त्यलोकमेंसे मैं देवराजका वांछित उपहार कहाँ प्राप्त कर सकूँगा? परन्तु उसे प्राप्त किये बिना भी तो काम नहीं चल सकता। वह दूरपर दिखाई देनेवाले वृक्षोंके झुरमुटकी ओर चला। वहाँ पहुँच कर उसने देखा कि वृक्षोंके पास ही मटियाले रंगके विविध प्रकारके सैकड़ों स्तूप-से बने हुए हैं। देवदूत पहले-पहल यह निर्धारित न कर सका कि ये क्या हैं; परन्तु, थोड़ी देर बाद, जब वह अपना कौतूहल शान्त करनेके लिये, एक स्तूपके पास गया, तब उसे मालूम हुआ कि ये मिट्टीके बेढंगे ढेर इस अभागे लोकके निवासियोंके घर हैं! चन्द्रदेव बिना किसी प्रकारकी झिझकके एक मकानमें प्रविष्ट हो गये।

मकानके दालानकी बाईं ओर एक बरामदा था। इस बरामदेमें तीन चारपाइयाँ बिछी हुई थीं। एक चारपाईपर बिछे हुए मैले-कुचैले कपड़ों-

पर एक छः बरसका बालक लेटा हुआ था; शेष दोपर एक वृद्ध स्त्री और एक वृद्ध पुरुष लेटे हुए थे। ये सब प्राणी सर्वथा क्षीण, दीन और दुर्बल थे। बालककी शय्या बीचमें थी और वृद्धा तथा वृद्ध उसके दोनों ओर लेटे हुए थे। बालक बड़े करुण स्वरमें "हाय-हाय" कर रहा था। दोनों वृद्ध पति-पत्नी बड़ी व्यथासे उसकी ओर देख रहे थे। विचित्र दृश्य था। चन्द्रदेव बहुत ही आश्चर्य तथा दुःखमें पड़ गये। ओह! इस लोकके निवासी इतने हीन, क्षीण और शक्तिरहित होते हैं! थोड़ी देरमें बालक रोती हुई आवाज़में, चिल्ला कर, पुकार उठा—"पानी, पानी!" दोनों वृद्ध व्यक्तियोंने, मानों बालककी आवाज़को प्रतिध्वनित करते हुए, क्षीणस्वरमें धीरेसे कहा—"पानी, पानी!"

देवदूतको अब पूरी बात समझनेमें देर न लगी। वह स्वर्गलोकमें अनेक बार मर्त्यलोकके भयंकर अकालोंका वर्णन सुन चुका था; परन्तु इन कष्टोंकी इतनी भीषणताकी उसे कल्पना भी न थी। बात यह थी कि इस वर्ष फारस देशमें भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा हुआ था। अन्न तो क्या कहीं पानीका भी नामो-निशान न था। ये तीनों अभागे प्राणी इसी दुर्भिक्षके शिकार थे। तीनों प्यासे थे, तथापि दोनों वृद्ध व्यक्तियोंको अपनी अपेक्षा पुत्रकी प्यास बुझानेकी अधिक चिन्ता थी; परन्तु वे लाचार थे, कुछ हो ही नहीं सकता था। चन्द्रदेव हृदय थामकर इस करुण दृश्यको देखते रहे, उन्हें मर्त्यलोकमें किसी जीवकी सहायता करनेका अधिकार नहीं था।

थोड़ी देर बाद बालक फिर चिल्लाया—"पानी, पानी!" परन्तु इस बार उसका स्वर पहलेकी अपेक्षा बहुत क्षीण था। शायद बालककी निष्पाप आँखोंने उसकी माँग पूरी करनेका यत्न किया। उसकी आँखोंके दोनों गढ़े आँसुओंसे भर गये। थोड़ी ही देरमें बालकको

हिचकी आई, और इसके बाद उसकी देह प्राण-शून्य हो गई ! दोनों वृद्ध पति-पत्नी अनिमेष नेत्रोंसे अपने प्राणाधिक पुत्रकी ओर देखते रह गये !

देवदूत एकदम प्रफुल्लित हो उठा; नहीं माळूम, इस प्रसन्नताका क्या कारण था। उसने शीघ्रतासे बालकके आँसुओंका संग्रह कर लिया और इसके बाद वह अपने शुभ्र पंखोंकी सहायतासे स्वर्गलोकको चला गया।

× × ×

देवराज इन्द्र स्नान-ध्यान समाप्त करनेके अनन्तर सभा-भवनकी ओर जा ही रहे थे कि चन्द्रदेवने आकर उन्हें प्रणाम किया। चन्द्रके हाथमें क्या चीज़ है—यह देखते ही देवराज उसकी सारी कथा स्वयं जान गये। उन्होंने धीरेसे कहा—"यह मर्त्यलोकका सर्वोत्कृष्ट उपहार नहीं है। जाओ!"

चन्द्रदेव मन मारकर रह गये।

(३)

ऊँची अट्टालिकाकी छतपरसे ही चन्द्रदेव उन प्रेमी और प्रेमिकाकी बातें सुनने लगे। प्रेमिकाने अपनी आवाज़को स्थिर करके धीरेसे कहा—"प्रियतम, मातृ-भूमि शत्रुओंसे घिरी हुई है।"

"सो मैं जानता हूँ" कहकर वह अपनी प्रेमिकाके मुँहकी ओर देखने लगा।

युवती कुछ कहना चाहती थी, परन्तु लज्जावश वह उसे कहते-कहते रुक जाती थी। उसकी अन्तरात्मा बार-बार जिस बातको उसके गले तक लाती थी, उसका हृदय उसे मुँहसे बाहर निकलनेका अवकाश न देता था। दोनों थोड़ी देर तक चुपचाप बैठे रहे। इसके बाद प्रेमिकाने बड़े यत्नसे कहा—"प्रियतम हेरिस, कल शायद हमारी मातृ-भूमिकी स्वतन्त्रताका अन्तिम दिन है; इसके बाद पराधीनताका घना अन्धकार हमारी मातृ-भूमि फ्रांसको सदाके लिए आच्छादित कर लेगा।"

नवयुवक हेरिस इसपर भी कुछ न बोला। उसने एक बार अपनी प्रेमिकाकी ओर देखकर ठण्डा श्वास लिया। मानों वह कह रहा था—'प्रिये, अभी तो हमें परस्पर मिले थोड़े ही दिन हुए हैं। क्या इतनी जल्दी इस स्नेह-बन्धनका विच्छेद कर देना पड़ेगा?'

थोड़ी देर और चुप रहनेके बाद प्रेमिकाने फिर कहा—"प्रिय हेरिस, मैं चाहती हूँ कि मैं भी तुम्हारे साथ मातृ-भूमिके शत्रुओंका मुक़ाबला करने चलूँ।"

यह वाक्य कहते हुए उसका स्वर काँप रहा था। नवयुवक हेरिस डरपोक नहीं था। अपनी प्रेमिकाकी अन्तिम बात सुनकर उसकी अस्थिरता दूर हो गई। उसने शीघ्रतासे अपना कर्तव्य निश्चित कर लिया। इसके बाद दोनों प्रेमी एक दूसरेके गलेमें हाथ डालकर प्रेमभरी बातें करते रहे। चन्द्रदेव उन सब बातोंको सुन रहे थे।

सारी रात दोनों प्रेमी बिलकुल नहीं सोये। उनकी बातोंका कभी समाप्त न होनेवाला अक्षय कोष प्रातःकालके नवीन सूर्यकी नरम किरणोंने बीचमें ही बन्द कर दिया। नवयुवक हेरिसकी बिदाईका समय आ गया।

अन्तमें वीर-स्वभाव हेरिसने ठण्डी आह भर कर अनिश्चित कालके लिए विदा ले ली। जबतक वह गलीमें दीखता रहा, प्रेमिका दर्वाजेपर खड़ी होकर अनिमेष नेत्रोंसे उसे निहारती रही। इसके बाद युवती ऊपरकी छतपर जाकर नगरके राजमार्गपर जाते हुए हेरिसके साथ रूमाल हिला-हिला कर प्रेमालाप करती रही।

जब नवयुवक हेरिस बहुत दूर जाकर, प्रातःकालकी धुंधमें लीन होकर, प्रेमिकाकी आँखोंसे ओझल हो गया, तब उस देवीने दूरपर धुँधले परन्तु शून्य आकाशकी ओर देखते रहकर एक ठण्डी आह भरी,

इसके साथ ही उसकी बड़ी-बड़ी आँखोंसे दो बूँद आँसू टपककर उसके गुलाबी चेहरेपरसे ढुलकते हुए नीचेकी ओर खिसक गये। चन्द्रदेव अभीतक शान्त होकर इस दृश्यको देख रहे थे, उन्होंने अदृश्य रूपसे पास आकर पवित्र प्रेमकी पुण्यस्मृति-स्वरूप उन आँसुओंको चुरा लिया। इसके बाद वह अपने पँखोंकी सहायतासे स्वर्गकी ओर उड़ गये।

× × ×

देवराज इन्द्र बड़ी गम्भीरतासे गुरु बृहस्पतिका प्रातःकालीन उपदेश सुन रहे थे। इतनेमें चन्द्रदेव वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने बड़ी नम्रतासे देवराजको नमस्कार किया; परन्तु देवराजने एक बार चन्द्रकी ओर देख कर बड़ी शान्तिसे केवल इतना ही कहा—"चन्द्र! तुम्हारा यह उपहार सचमुच बहुत उत्कृष्ट है, तथापि यह मर्त्यलोककी सर्वोत्कृष्ट वस्तु नहीं है।"

चन्द्रदेवका दिल टूट गया। वह मर्त्य लोकके भयंकर चित्रकी कल्पना करके काँप उठे।

(४)

एक सुन्दर बाग़में एक सोनेका पिंजरा टँगा हुआ था। चारों ओर विविध रंगोंके बड़े-बड़े फूल खिले हुए थे। ठण्डी हवा चल रही थी; हरे-हरे वृक्षोंके पत्तोंसे मधुर शब्द उत्पन्न हो रहे थे। पिंजरेके अन्दर किशमिश, अंगूर, अनार आदि कई फल पड़े हुए थे। इस पिंजरेमें एक काबुली तोता, जिसके गलेपर लाल रंगकी कुण्डली बनी हुई थी, सिर नीचा किये बैठा था।

मगधके सम्राट् समुद्रगुप्तने अपनी कन्या अपराजिताके लिए खास काबुलसे यह तोता मँगवाया था। अपराजिता इस तोतेको बहुत प्यार

करती थी; उसे सब प्रकारसे सुखी करनेका प्रयत्न करती थी। परन्तु, वह कभी प्रसन्न न होता था। अपराजिताके प्रेमके प्रभावसे, वह उसके रटाये हुए वाक्य तो अवश्य सुना देता था; परन्तु उसका मन सदैव उदास रहता था। इस बातको राजकुमारी अपराजिता भी जानती थी कि यह काबुली तोता इस रमणीक उद्यानको कन्दहारकी सूखी पहाड़ियोंके सामने कुछ भी मूल्यवाला नहीं समझता।

सायंकालका समय था; लता-कुञ्जमें लटके हुए पिंजरेमें वह काबुली तोता सिर नीचा किये बैठा था। इसी समय चन्द्रदेवता उसके पास आकर खड़े हो गये। आज सम्राट् समुद्रगुप्तके इस सुन्दर उद्यानको देख कर उनकी यह धारणा नष्ट हो गई कि मर्त्यलोक सर्वथा नीरस है। सहसा एक कुञ्जकी घनी छायाके नीचे पिंजरेमें बैठे हुए तोतेपर उनकी नजर पड़ी। पहली नज़रमें उसकी शोकमग्नता उनसे छिपी न रही। वह चुप-चाप खड़े होकर उसकी ओर देखने गले।

ठीक इसी समय पश्चिमी दिशासे एक और तोता आकर पिंजरेके पास वाले मौलश्रीके पेड़पर बैठ गया। इस तोतेके गलेपर भी लाल रंगका कुण्डल बना हुआ था। वृक्षपर बैठते ही तोता चिल्ला उठा—"टीं, टीं।" पिंजरेमें बैठे हुए तोतेकी मानों सहसा नींद टूट गई। वह झुकी हुई गर्दनको उठाकर बैठ गया और सामने वाले मौलश्रीके पेड़पर बैठे हुए अपने देश-बन्धुकी ओर देखकर कातर स्वरसे वह भी पुकार उठा—"टीं!, टीं!!" इसके साथ ही साथ उसकी आँखोंसे दो बूँद आँसू टपक पड़े। चन्द्रदेव शेष दृश्यको देखनेकी प्रतीक्षा न करके शीघ्रतासे उन आँसुओंके जलसे भीगी हुई मिट्टीको उठाकर स्वर्गलोककी ओर चल दिये।

× × ×

देवराज इन्द्र स्वर्गकी अप्सराओंका नाच देख रहे थे। इसी समय चन्द्रने आकर मरकतमणिसे बनी हुई हलके नीले रंगकी थालीमें रक्खी हुई वह अश्रु-जल-सिंचित मिट्टी उन्हें भेंट की। देवराजने प्रसन्न होकर कहा—" चन्द्रदेव, अब तुम पाप-मुक्त हुए। सचमुच यह मर्त्यलोकका सर्वोत्कृष्ट उपहार है।"

गोरा

(१)

कह नहीं सकते कि सुखी जीवनकी वास्तविक पहिचान क्या है, फिर भी इतना निश्चित है कि जीवन एक सुखी किसान था। आर्थिक दृष्टिसे वह बिलकुल दरिद्र था। गाँवकी हद जहाँ जंगलसे मिलती थी, उस स्थानकी २०—२५ बीघा मामूली ढँगकी ज़मीनपर उसका मौरूसी हक़ था। उसके परिवारमें पत्नीके अतिरिक्त २—३ बच्चे भी थे। घर-गिरस्तीके लिये आवश्यक सामानका उसके पास अभाव नहीं था। मुरब्बा और परौंठे न सही नमकीन सत्तू ही सही—यह परिवार जिस किसी तरह दोनों जून अपने पेटके गढ़ोंको भर अवश्य लेता था। पति-पत्नीमें खूब निभती थी। दोनों ही शरीरसे स्वस्थ और स्वभावके मीठे थे। जीवन मेहनती आदमी था। उसे काम करनेका शौक़ था—मानों वह इसके लिये बहाने ढूँढ़ता हो। रबीकी फ़सल कट चुकनेके बाद भी उसे किसीने सुस्ताते नहीं देखा। उन दिनोंके लिये वह पहिले-ही-से अपनी ज़मीनके ५—७ कम उपजाऊ बीघोंको घेर-घारकर तय्यार कर रखता था। यहाँ खरबूज़े बोये जाते थे। जीवन-परिवारके ये दिन बड़े मज़ेमें कटते थे। खरबूज़ोंके खेतमें जामुनकी घनी छायाके नीचे फूँसकी एक ज़रासी झोपड़ी; यही जीवनके खरबूज़ोंका स्टोर-हाऊस था और यही उसके परिवारका आश्रय-स्थान। वैशाख मासके गर्म दिनोंकी दो पहर जामुनके इसी पेड़की छायामें कटा करती थी। साँझके बाद, दिन भर बिकनेसे बचे हुए खरबूज़ोंके साथ गेहूँकी रोटी खाकर ये लोग ईश-

रको दुआएँ दिया करते थे। उन्हें न धनियोंसे द्वेष था और न ज़मीन-दारसे ईर्ष्या।

वैशाख मासकी किसी चाँदनी रातको पास-ही-से एक हलकी-सी आवाज़ सुनकर जीवनकी नींद उचट गई। करीब आधी रात बीत गई थी। जीवनको भय हुआ कि कहीं बाढ़ फाँदकर गीदड़ तो खेतमें नहीं घुस आये, परन्तु एक वार चाँदनीमें अपने छोटेसे खेतको भली प्रकार देख लेनेपर उसका यह सन्देह दूर हो गया। इसी समय उसे फिरसे वही आवाज़ सुनाई दी। यह आवाज़ सुनकर जीवन पहिचान गया कि खेतके पासवाले जंगलमें, कोई जंगली जीव किसी गायके बछड़ेपर आक्र-मण कर रहा है। अपने खेतमें किसी प्रकारका उपद्रव न देखकर पहिले तो जीवनकी इच्छा हुई कि न जाऊँ—क्यों मुफ्तमें एक बछड़ेके लिये अपनी जान ख़तरेमें डालूँ; परन्तु बार बार 'बाँ' 'बाँ'की करुण चिल्ला-हट सुनकर वह रह न सका। जीवन खाटसे उतरकर खड़ा हो गया। एक हाथमें मज़बूत डण्डा और दूसरे हाथमें टूटी हुई चिमनीवाला, बर-सोंका पुराना हरिकेन लैम्प लेकर वह उसी ओर चल दिया जिस ओरसे कि आवाज़ आ रही थी।

खेतकी हद्दसे मिलकर जो जँगल मीलों तक फैला हुआ था, उसका प्रान्त भाग बहुत घना नहीं था। साधारण झाड़ियों और ढाकके पेड़ोंके अतिरिक्त कोई बड़ा वृक्ष वहाँ नहीं था। जंगलमें प्रविष्ट होकर, एक बड़े कुण्डकी ओटमें उसने देखा कि एक छोटेसे बछड़ेपर ४—५ गीदड़ आक्र-मण कर रहे हैं और वह बेचारा जमीनपर लेटा हुआ बड़े करुण स्वर-में 'बाँ' 'बाँ' कर रहा है। एक लैम्प-हस्त आदमीको अपनी तरफ़ आता हुआ देखकर सब गीदड़ भाग खड़े हुए।

जीवनने पास जाकर देखा कि बछड़ेको बहुत अधिक चोट नहीं आई है। सिर्फ़ उसकी अगली दाईं टाँग और पीठका कुछ भाग ही ज़खमी हुआ है। जीवनने अनुमानसे पहिचाना कि उसकी आयु दो माससे अधिक प्रतीत नहीं होती। बछड़ेका रंग बिलकुल श्वेत था और उसके माथेपर लाल शंखका निशान बना हुआ था। जीवन बछड़ेको धीरेसे गोदमें उठाकर अपनी झोंपड़ीमें चला गया।

प्रातःकाल उठकर जीवनने जाँच करके देखा कि बछड़ेकी जात बहुत अच्छी है। अगर कुछ यत्न किया जाय तो वह एक बहुत बढ़िया बैल बन सकता है। जीवनकी घरवाली अभी सोई ही हुई थी कि जीवनने इस बछड़ेको उसकी चारपाईपर डाल दिया। वह हड़बड़ाकर उठ बैठी। इस प्रकार अकस्मात् निद्रा-भंग हो जानेका कारण भी अभी तक वह पूरी तरहसे नहीं समझ पाई थी कि उसने सुना; जीवन कह रहा था —"परमेश्वरने पालनेके लिये तुम्हें एक और बच्चा दिया है।"

पति-पत्नी दोनोंने सम्मिलित रूपसे खूब सोच-विचारकर इस मनुष्येतर जातिके बालकका नाम रक्खा—'गोरा।'

जीवनकी किस्मत अच्छी थी। उसके प्रयत्नसे गोराके दोनों घाव शीघ्र ही भर गये। अच्छा होकर वह खूब कूदने फाँदने लगा। कुछ ही महिनोंमें गोराका डील-डौल खूब भर आया। उसके कन्धे उन्नत और पट्ठे मज़बूत हो गए।

(२)

देखते ही देखते 'गोरा' एक बड़ा डील-डौलवाला बैल बन गया। उसके मुकाबिलेका बैल आसपासके अनेक गावोंमें मिलना कठिन था। उसकी चाल हाथीकी चालके समान मस्तानी थी और उसकी गरज बाद-

ल्की गरजके समान गम्भीर। लोग उसे अब विस्मयके साथ देखते और जीवनके भाग्योंकी सराहना करते थे।

जीवनको गोरापर अपने बच्चोंके समान प्रेम था। प्रतिदिन दोनों समय मेहनत करके वह उसके लिये कुटी तय्यार किया करता था। यथाशक्ति वह उसे कभी कभी तेल और घी भी पिलाया करता था। जीवनकी घर–वालीको तो गोरासे एक तरहका मोह हो गया था। वह उसे हर समय आँखोंके सामने रखना चाहती थी। उसके छोटे बच्चे उस विशालकाय बैलकी चौड़ी छातीके नीचे खड़े होकर उसके गलेकी नरम और सुन्दर सास्नाको अपने चंचल हाथोंसे इधर उधर हिलाया करते थे। गोरा आँखें बन्द करके बच्चोंके इस अबोध-प्यारका मज़ा लिया करता था। गोराके डील-डौलका दूसरा बैल जीवनके पास तो क्या, गाँव-भरमें नहीं था, इस कारण जीवन उसे हलमें नहीं जोत सकता था। यही दलील देकर बहुतसे लोगोंने एक एक हज़ार रुपयों तक दाम लगाकर गोराको जीवनसे ख़रीद लेना चाहा, परन्तु जीवनको यह मंजूर नहीं था। वह कहता था, कभी धनके लालचसे कोई अपनी सन्तानको भी बेचता है? जीवनके पास एक मामूली-सी बैलगाड़ी थी, वह गोराको इसीमें जोता करता था।

जीवनके गाँवके नज़दीक ही एक बहुत बड़ा सरकारी मैदान था। लोगोंमें मशहूर था कि मुसलमानी हुकूमतके दिनोंमें राह चलती हुई फौजें इसी मैदानमें पड़ाव किया करती थीं। आजकल यह मैदान एक ग्रामीण प्रदर्शिनीके काममें लाया जाता था। यहाँ शरद्-ऋतुमें सरकारकी ओरसे पशुओंकी एक बड़ी भारी नुमाइश की जाती थी। दूर दूरके लोग इस नुमाइशमें अपने जानवरोंको लाते थे। जो जानवर सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होते थे, उन्हें सरकारकी ओरसे इनाम भी दिया जाता था।

गाँवके ज़मींदारका नाम था लखपतराय । वह बेपरवाह, आलसी और शौकीन आदमी था। गाँवके काम-काजमें अधिक दखल देना उसे पसन्द नहीं था। यही कारण था कि उस गाँवके किसानोंको वर्षके अधिकांश भागमें अपने ज़मींदारसे कोई विशेष शिकायत नहीं रहती थी। परन्तु जिन दिनों ज़मींदारको दावत, शिकार या सरकारी अफ़सरोंकी ख़ातिर-दारी करनेकी ख़ब्त सवार होती थी, उन दिनों गाँववालोंकी आफ़त आ जाती थी। नुमाइशके महीनेमें जब ज़िलेके कुछ छोटे मोटे अफ़-सर इन्तज़ामका काम करनेके लिये इस गाँवमें आते थे, उन दिनों उनकी ख़ातिर करते करते किसानोंकी जान निकलने लगती थी।

प्रदर्शिनीकी प्रतिस्पर्धामें भाग लेनेका ज़मीन्दारको खास शौक था। उसने कुछ बैल और घोड़े महज़ इसी कामके लिये पाल रक्खे थे। ज़मींदारके जानवर थे, खाने पीनेकी क्या कमी? खासकर नुमाइशके दिनोंमें एक एक जानवरके पीछे चार चार किसान दिन-रात भागे फिरते थे। नुमाइशका सबसे पहिला इनाम कई बरसोंसे लखपतरायको उसके एक बैलके लिये मिल रहा था। इस वर्ष भी ज़मीन्दारको यह विश्वास था कि प्रदर्शिनीका प्रथम पुरस्कार उसीके हाथमें रहेगा।

इधर लोगोंका यकीन था कि ज़मींदारके बैलका गोरासे कोई मुका-बिला ही नहीं है। यदि दोनों बैलोंको भिड़ा दिया जाय तो गोरा एक ही वारमें ज़मींदारके बैलको दूर पटक दे। इस कारण लोग जीवनपर इस बारकी प्रदर्शिनीमें सम्मिलित होनेके लिये ज़ोर डाल रहे थे, मगर वह इन्कार करता था। मगर यार लोग भी कब माननेवाले थे? ख़ास कर जो लोग प्रतिवर्ष ज़मींदारसे नीचा देखते थे, वे भला इस सुवर्ण-अवसरको किस तरह हाथसे जाने देते? आख़िर लोगोंने इस वर्षकी प्रदर्शिनीमें सम्मिलित होनेके लिये जीवनको तय्यार कर ही लिया।

नतीजा यह हुआ कि इस वर्ष नुमाइशका प्रथम पुरस्कार ज़मींदारको नहीं मिल सका, गोरा ही इस इनामका अधिकारी समझा गया।

(३)

जीवन अपनी गाड़ीको घरकी तरफ़ दौड़ाये लिये जा रहा था। गोराके लिये यह खाली गाड़ी फूलके समान हल्की थी। गोराने कल ही नुमाइशमें नामवारी हासिल की थी, इसलिये जीवनने उसे आज यथेष्ट घी पिलाया था। गोराके गलेमें उसने फूलोंकी एक माला डाल रक्खी थी। पशु होते हुए भी गोरा यह समझ गया था कि आज उसका मालिक उससे विशेष प्रसन्न है। इस कारण वह मस्तानी चालसे गाड़ीको उड़ाये चला जा रहा था। गाड़ीमें बैठा हुआ जीवन, अपने ऊबड़-खाबड़ स्वरमें कोई ग्रामीण गीत गा रहा था।

अपने घरके सामने पहुँचते ही जीवनका हृदय किसी निकट अनिष्टकी आशंकाके भयसे काँप उठा। उसके घरके द्वारपर ज़मींदारका कारिन्दा खड़ा हुआ था। जीवनका उन्मुक्त संगीत सहसा रुक गया। अजान पशुने भी मानों अपने मालिकके मनका भाव भाँप लिया—उसकी चाल धीमी पड़ गई।

इसी सयय कारिन्देने आगे बढ़कर आदेश दिया—"जीवन, चलो, तुम्हें ज़मींदारने याद किया है।"

"भाई साहब, राम राम" कहकर जीवनने बड़ी नर्म आवाज़से पूछा—"कुछ मालूम है कि मुझे मालिकने क्यों बुलाया है?"

कारिन्देने लापरवाहीसे जवाब दिया—"नहीं, मुझे क्या मालूम?"

जीवन ज़मींदारके सम्मुख पहुँचा। ज़मींदार लखपतराय अपने मकानके सहनमें धीरे धीरे टहल रहा था। जीवनने वहाँ पहुँचकर उसे झुककर बन्दगी की।

लखपतरायने मुस्किराकर कहा—" जीवन, नुमाइशकी जीतके लिये बधाई ! "

जीवनका हृदय काँप गया। यह ताना है या बधाई ! उसने धीमेसे सिर्फ़ इतना ही कहा—" यह हजूरकी मेहरबानी है। "

अब ज़मींदारने खूब गम्भीर होकर कहा—" जीवन, मैं सचमुच तुम्हारे बैलसे बड़ा प्रसन्न हूँ। मैं उसे तुमसे ख़रीद लेना चाहता हूँ। मुझे मालूम हुआ कि वह बैल तुम्हारे यहाँ बिल्कुल निठल्ला रहता है, इसलिये मुझे उम्मीद है कि उसे बेचनेमें तुम आनाकानी न करोगे। "

जीवन काँप गया। उसने कोई जवाब नहीं दिया।

ज़मींदारने कहा—" बोलो, चुप क्यों हो ? "

जीवन धीरेसे बोला—" हजूर, आपके पास जानवरोंकी क्या कमी है। उस बैलको मैं बेचना नहीं चाहता। "

" तुम्हें उसके बदले मुँह माँगा दाम मिलेगा। "

" मैं उसे किसी भी दामपर बेचना नहीं चाहता। हजूर, मैं खुद भी तो आपहीकी जायदाद हूँ। "

ज़मींदारने अब प्रलोभन देनेका प्रयत्न किया—" तुम्हारा लगान माफ़ कर दूँगा। "

जीवनने नकारात्मक उत्तर दिया।

ज़मींदार इसपर भी निराश नहीं हुआ। अब उसने अपने ब्रह्मास्त्रका वार किया—" तुम्हें यह बैल मुझे बेच देना होगा। "

जीवन चुप रहा।

ज़मींदारने फिर कहा—" सीधी तरहसे नहीं दोगे, तो फिर किसी और उपायसे दोगे ! "

जीवनको भी कुछ आवेश आ गया। उसने काँपती हुई आवाज़में कहा—" हरगिज़ नहीं।"

ज़मींदारने कहा—" अच्छा, जाओ।"

इस दिनके बादसे अभागे जीवनपर जमींदारने सख्ती करना शुरू किया। उससे कठिन बेगार ली जाने लगी। बेगार ऐसी ली जाती थी कि गोराको दिन-रात काममें लगा रहना पड़े। कभी कभी अकेले गोराको ही बेगारमें माँग लिया जाता था। जीवनके दरिद्र परिवारपर यह एक नई आफ़त आ खड़ी हुई। परन्तु फिर भी जीवनने पराजय स्वीकार नहीं की। अपनी किस्मतके भरोसे जीवन यह सब अत्याचार सहने लगा।

(४)

जंगलसे लकड़ियाँ काटकर गाँवकी तरफ़ लौटते हुए जीवन काँप उठा। आस्मान अचानक काले काले बादलोंसे घिर आया था। जीवनको जिस बातका भय था, आख़िर वही हुई। इस चौमासेके दिनोंमें गाँवसे तीन-चार मील दूर एक बरसाती नाला पार करके लकड़ियाँ काटने जाना सचमुच एक बड़े जोखिमका काम था। बरसातके कारण नालेका कोई विश्वास नहीं था, वह न जाने कब भरकर बहने लगे। आज प्रातःकाल लखपतरायने जीवनको इसी जंगलसे बेगारमें लकड़ियाँ काट लानेका आदेश दिया था। जीवन जब घरसे चला था तब आस्मान साफ़ था, और नालेमें भी बहुत कम पानी था। परन्तु साँझके समय ज्यों ही गड्डेमें लकड़ियाँ भरकर वह लौटनेको तय्यार हुआ, त्यों ही इन्द्र देवताकी सेनाने एक साथ आकाशमण्डलपर चढ़ाई कर दी।

जीवनने रास हिलाकर गोरेको भागनेका आदेश दिया। बरसाती नाला इस स्थानसे चार-पाँच फ़र्लांग ही दूर था। जीवनकी इच्छा थी

कि वह जिस-किसी तरह भागकर गड्डेसहित इस नालेके पार पहुँच जाय, उसके बाद देखा जायगा। परन्तु इस समय तक वर्षा बड़े ज़ोरसे शुरू हो गई थी। नालेके रेतीले किनारेपर पहुँचकर जीवनने बड़े दुःखके साथ देखा कि नाला खूब भरकर बह रहा है। जीवन निराश हो गया। अब कई घण्टे तक इसी पार बैठे रहनेको वह बाध्य था। वर्षाकी बौछार जीवनके शरीरपर खुले रूपमें पड़ रही थी, इसलिये वह गड्डेसे उतरा। उसने गोरेको गाड़ीसे खोलकर किनारेका हरा हरा घास चरनेके लिये छोड़ दिया। इसके बाद गड्डेकी लकड़ियोंको उसने कुछ ऐसे ढँगसे रक्खा कि उनके अन्दर एक खोहसी बन गई। इस खोहके ऊपर अपनी चादर फैलाकर, वर्षासे बचनेके लिये जीवन अन्दर बैठ गया।

सहसा गर्दन उठाकर गोरा एक बार बड़े ज़ोरसे गरज उठा। गोराकी यह गरज सुनकर जीवन भयसे सिहिर उठा। धड़कते हुए दिलसे उसने अपनी खोहमेंसे सिर बाहर निकाला। देखा, गोरा अब भी पहिले-ही-की तरह निश्चिन्ततासे हरी हरी घास चर रहा है। वर्षा इस समय भी कम नहीं हुई। नालेके मटियाले पानीमें वर्षाकी बड़ी बड़ी बूँदें पड़कर उसे विक्षुब्ध कर रही हैं। इन बूँदोंकी मारसे मानों वह नाला बौखला—सा उठा है। जीवनने जंगलकी तरफ़ मुड़कर देखा—चारों ओर सन्नाटेका राज्य है। केवल वर्षा पड़नेकी साँय साँय आवाज़ इस निस्तब्धताको भंग कर रही है। जंगलके हरे हरे वृक्ष वर्षामें एक साथ चुपचाप स्नान कर रहे हैं। जीवनने फिरसे अपना सिर खोहमें छिपा लिया। इस नीरव सन्नाटेमें उसे कुछ कुछ भय प्रतीत होने लगा।

थोड़ी देरमें बादल फट गये। वर्षा बन्द हो गई। पूर्व दिशामें इन्द्र-धनुष निकल आया। सूर्य डूबनेमें अब अधिक समय नहीं रहा था। सूर्यकी अन्तिम किरणोंने बादलोंमें अनेकों रंग पोत दिये थे। उनके

प्रतिबिम्बसे बरसाती नालेका पानी भी पिघले हुए सोनेकी उज्वल धारके समान प्रतीत हो रहा था। जंगलमें मोर बोलने लगे। प्रकृतिका सन्नाटा भंग हो गया। चारों ओरका दृश्य स्वर्गीय हो उठा। परन्तु बेगारमें पकड़े गये जीवनका ध्यान इन दृश्योंकी ओर नहीं था। वह बड़ी उत्कण्ठासे नालेका पानी कम हो जानेकी प्रतीक्षा कर रहा था।

धीरे-धीरे नालेका पानी भी उतर गया। जीवनकी अब जानमें जान आई। गोराको गड्डेमें जोतकर वह फिरसे अपनी खोहमें आ बैठा, और रास हिलाकर गोराको चलनेकी आज्ञा दी। सामने सूर्य अस्त हो रहा था।

किनारेके उस हरे मैदानसे उतरकर गोरा नालेके रेतीले तटपर पहुँचा। परन्तु पानीके निकट पहुँचते ही गोरा किसी चीजको देखकर सहसा चौंक उठा। उसके पैर क्रिया-शून्य हो गये। गाड़ी रुक गई।

जीवन फिरसे काँप उठा। डरते डरते खोहमेंसे उसने अपना मुँह बाहर निकाला। नालेकी ओर देखते ही उसके होश गुम हो गये। उसने देखा—उत्तरकी ओर गड्डेसे करीब २० गज दूर ही, एक बड़ा-सा शेर खड़ा है और वह गड्डेकी ओर देखकर गुर्रा रहा है!

अगले ही क्षण शेर बड़ी जोरसे गरज उठा। उसकी गरज समीपस्थित पहाड़ीके साथ टकराकर गूँज उठी। पासके जंगलमें फिरसे सन्नाटा छा गया।

जीवन उसी प्रकार अनिमेष नेत्रोंसे शेरकी तरफ़ देखता रहा। परन्तु शेरने अभी तक उसकी तरफ़ नहीं देखा था, वह गोराके श्वेत-श्वेत और मोटे-ताज़े जिस्मको देखकर ही गुर्रा रहा था। शेरकी भयंकर गरज सुनकर गोरा काँप उठा। वह बड़े करुण स्वरमें चिल्लाया—बाँ! बाँ!!

इसी समय शेर धीरे-धीरे, बड़ी शानसे कदम बढ़ाता हुआ गोराकी तरफ़ बढ़ा। जीवन इस समय भी खोहसे गर्दन बाहर निकाले रखकर शेरकी ओर देख रहा था। यदि वह अब भी चाहता तो खोहमें छिपकर अपनी जान बचा सकता था।

शेरको अपनी तरफ़ बढ़ता हुआ देखकर वह अबोध जानवर अत्यधिक करुण-स्वरमें फिर चिल्लाया—"बाँ! बाँ!!"

गोराका यह करुण-स्वर सुनकर जीवन सहसा विचलित हो उठा। उसे स्मरण आया—आजसे दो वर्ष पूर्व गोराकी यही करुण 'बाँ' 'बाँ' सुनकर ही मैंने उसकी गीदड़ोंसे रक्षा की थी, क्या आज मैं उसे शेरके मुँहसे नहीं बचा सकता?

जीवन कूदकर गोराकी पीठपर लिपट गया! अगले ही क्षणमें वह शेर एक बार फिर बड़े ज़ोरसे गरजकर गोरापर झपटा, परन्तु उसके तेज़ नाखून गोराके भरे हुए शरीरमें न धँसकर जीवनकी सूखी हुई पीठमें जा धँसे!

शेरने इसी शिकारको पर्याप्त समझा। वह दरिद्र परन्तु आश्रित-वत्सल जीवनकी पवित्र देहको लेकर जंगलमें प्रविष्ट हो गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल जीवनके रिश्तेदार उसे ढूँढ़ते हुए वहाँ पहुँचे। गोरा अब भी उसी तरह निश्चल भावसे खड़ा था। गड्ढेकी खोहके ऊपर जीवनकी मैली चादर अब भी उसी तरह फैली हुई थी। गोरेकी पीठपर खूनके बड़े बड़े दाग़ और रेतपर शेरके पंजोंके बड़े बड़े निशान देखकर उन्हें सारी घटना समझनेमें देर न लगी!

× × × ×

जीवनका यह आत्म-बलिदान आसपासके सब गाँवोंमें प्रसिद्ध है। लोग उसका नाम बड़ी श्रद्धासे लेते हैं। गोरा आज भी जीवित है, परन्तु अब वह उतना मज़बूत नहीं रहा। लोग कहते हैं कि स्वामीके शोकमें वह दिन प्रति दिन घुलता चला जा रहा है। लखपतराय भी अपने व्यवहारपर शर्मिन्दा है। उस दिनके बादसे फिर कभी उसने गोराके लिये आग्रह नहीं किया।

ताड़का पत्ता

(१)

डॉक्टर रीन जब भारतवर्षकी यात्रा समाप्त करके अपने देश जर्मनीमें पहुँचे, तब उनकी प्रसन्नताका पारावार न था। विदेशसे वापस आकर अपने बंधुओंसे मिलनेमें जो प्रसन्नता होती है, वह तो उन्हें थी ही; परंतु उनकी इस बेहद खुशीका एक और कारण भी था। इससे पूर्व भी डॉक्टर रीन कई बार एशियाई देशोंका भ्रमण करके स्वदेश लौटे थे, परंतु उनके घरवालोंने उन्हें इतना अधिक प्रसन्न कभी न देखा था। घर पहुँचकर भारतवर्षसे लाया हुआ विविध सामान अपनी पत्नी तथा बच्चोंको देते हुए उनके प्रशस्त मुखपर जो सरल मुस्किराहट निरंतर बनी हुई थी, वह उनकी हार्दिक प्रसन्नताका सबसे बड़ा प्रमाण थी।

डॉक्टर रीनको पुरातत्त्वसे बहुत प्रेम था। वह बर्लिनकी विश्वविख्यात युनिवर्सिटीमें, इसी विषयके मुख्य उपाध्याय थे। युनिवर्सिटीके संपूर्ण उपाध्याय और विद्यार्थी उनकी योग्यताके क़ायल थे। वह रात-दिन किसी-न-किसी खोज़में व्यस्त रहते थे, यहाँ तक कि उन्हें अपनी पत्नी तथा बच्चोंसे बातचीत करनेके लिये भी कम अवसर मिलता था। भारतकी इस यात्रासे वह भारतीय पुरातत्त्वका बहुत-सा सामान अपने साथ ले गये थे; कुछ प्राचीन पुस्तकें तथा सिक्के, महारानी नूरजहाँके घिसाए हुए जूते, मुग़ल बादशाहोंके बर्तन आदि विभिन्न प्राचीन वस्तुओंका एक अच्छा संग्रह वह अपने साथ ले गए थे। इसके अतिरिक्त विशुद्ध भारतीय ढंगकी गुड़ियाँ, खिलौने, मिठाई आदि भी वह पर्याप्त मात्रामें

अपने साथ लाए थे। बच्चे इन अद्भुत खिलौनों और मिठाइयोंको देखकर खुश हो रहे थे।

अपने पति और बच्चोंको इतना प्रसन्न देखकर श्रीमती रीनका हृदय आह्लादसे भर उठा। उसकी ओर देखकर डॉक्टर साहबने कहा—" हिंदोस्तानकी इस यात्रामें मुझे एक बड़ा भारी ख़ज़ाना हाथ लगा है। "

श्रीमती रीन इस बातका अभिप्राय न समझ सकीं। वह कौतूहलसे अपने पतिका मुँह देखने लगीं। डॉक्टर साहबने अपनी धर्मपत्नीको अधिक देर तक आश्चर्यमें न रखकर मुस्किराते हुए अपने संदूकमेंसे बड़े सुरक्षित ढंगसे रखा हुआ एक ताड़का पत्ता निकाला। इस पत्तेपर मटियाले अक्षरोंमें कुछ लिखा हुआ था।

डॉक्टर साहबकी इस अतुल संपत्तिको देखकर श्रीमती रीन खिलखिलाकर हँस उठीं। उन्होंने कहा—" तुम्हारे इस ख़ज़ानेके लिये तो शायद कुबेर भी तरसता होगा! "

डॉक्टर साहबने मुस्किराते हुए कहा—" यह ताड़का पत्ता एक ऐसे ख़ज़ानेकी कुंजी है, जिसमें अनंत वैभव भरा पड़ा है। शोक यही है कि कुँजी तो मेरे पास है; परंतु वह ख़ज़ाना हिंदोस्तानमें ही किसी जगह छिपा पड़ा है। उसे ढूँढ़नेके लिये मुझे फिर कभी उस विचित्र देशकी यात्रा करनी होगी। "

पति-पत्नीमें बहुत देर तक इसी बातको लेकर हँसी-मज़ाक़ होता रहा।

डॉक्टर रीनके इस ताड़पत्रकी कथा इस प्रकार है—डॉक्टर साहबको भारतवर्षकी भौतिक सभ्यतापर अत्यधिक श्रद्धा थी, उन्हें विश्वास था कि उसके द्वारा वर्तमान वैज्ञानिक जगत् भी बहुत-सी नई-नई बातें सीख सकता है। डॉक्टर साहब जब सैरके लिये भारतवर्ष आए थे, तब उनके

सामने एक यह उद्देश्य भी था कि इस भ्रमणमें वह भारतीय पुरातत्त्वकी कोई नई बात खोज निकालनेका प्रयत्न करेंगे।

उन दिनों भारतवर्षमें राज्य-परिवर्तनके दिन थे। मुगलोंकी हुकूमतका अंत हो रहा था और अँगरेज़ लोग नदीकी बाढ़की तरह बड़ी शीघ्रतासे अपना अधिकार बढ़ाते चले जा रहे थे। डॉक्टर रीनके एक अँगरेज़ मित्र, उन दिनों मदरास-प्रांतमें रेविन्यू कलक्टर थे। उन्होंने एक दिन हँसीमें अपने मित्रके पुरातत्त्व-प्रेमके चिह्न-स्वरूप यह फटा हुआ ताड़का पत्ता उन्हें समर्पित किया था। कलक्टर साहबको यह ताड़का पत्ता, कुछ दिन पूर्व, किसी गाँवके बाहर यों ही उड़ता हुआ मिला था। मित्र-द्वारा मज़ाक़के रूपमें प्राप्त इस चीज़को भी डॉक्टर साहबने बड़े यत्नसे अपने पास रख लिया। वापस लौटते हुए जहाज़में वह अपना अधिकांश समय इस ताड़पत्रकी खोजमें ही लगाया करते थे।

एक दिन अचानक उस ताड़पत्रमें उन्हें एक नई बात दीख पड़ी। उन दिनों योरपमें फ़ौलाद ढालनेकी बड़ी-बड़ी मशीनोंका आविष्कार नहीं हुआ था। भारतवर्षमें दिल्लीके लोहस्तंभको देखकर उन्हें अत्यधिक विस्मय हुआ था। वे यह बात जाननेके लिये लालायित थे कि भारतीयोंने, इस बड़ी कीलीका निर्माण किस प्रकार किया होगा। आज अचानक उनकी समझमें आया कि इस ताड़के पत्तेपर फ़ौलाद बनानेका ढँग लिखा हुआ है। डॉक्टर साहब प्रसन्नतासे उछल पड़े। अगर उस समय कोई दूसरा व्यक्ति उनके कमरेमें मौजूद होता, तो वह उन्हें अचानक इस अवस्थामें देखकर अवश्य यही समझता कि उनके दिमाग़की कोई कल अचानक ढीली पड़ गई है। प्रसन्नताका प्रथम आवेग शान्त होनेपर डॉक्टर साहबने कुछ शोकके साथ देखा कि यह ताड़का अकेला पत्ता किसी भी उद्देश्यको सिद्ध न कर सकेगा। यह तो किसी पुस्तकका

एक पृष्ठ-मात्र ही है। वह संपूर्ण पुस्तक प्राप्त किए विना उनका काम नहीं चल सकता। परन्तु यह सब होते हुए भी अब उन्हें इस बातका पूर्ण भरोसा हो गया था कि ज़रा-सा यत्न करनेपर वह सम्पूर्ण पुस्तकको अवश्य खोज निकालेंगे। यही भरोसा उन्हें बहुत अधिक प्रसन्न बनाए हुए था।

(२)

सन् १७९३ के दिसम्बर मासमें, पेरिस महानगरीमें अन्तर्जातीय पुरातत्त्व-महासभाका विशेषाधिवेशन हुआ। पुरातत्त्व-महासभाके इतिहासमें इस अधिवेशनकी महत्ता अत्यधिक है। उन दिनों पुरातत्त्व-अन्वेषणका कार्य बहुत ज़ोरोंपर था। इस विषयके विद्वानोंके तीन दल बने हुए थे। तीनों दलोंमें कुछ-कुछ प्रतिस्पर्धाका भाव आ चला था। प्रत्येक दल अपने-अपने विभागको सबसे अधिक महत्ता देने लगा था। बात यह थी कि उन दिनों संसारके तीन भिन्न-भिन्न स्थानों—मिस्र, भारत और कैस्पियन सागरके तटस्थ प्रांतपर—अन्वेषणका कार्य ज़ारी था। प्रत्येक स्थानके विद्वान् अपने स्थानको ही अधिकतम सभ्य और उन्नत सिद्ध करनेमें लगे हुए थे। इस पारस्परिक विवादको दूर करनेके लिये इस वर्ष पेरिसमें पुरातत्त्व-महासभाका यह असाधारण अधिवेशन बुलाया गया था। संसार-भरके प्रायः सभी मुख्य मुख्य पुरातत्त्व-विशारद इस अधिवेशनमें सम्मिलित हुए थे।

उपर्युक्त तीनों दलोंके पक्ष-पोषकोंने, अपने-अपने अन्वेषणके विभागके संबंधमें खूब विद्वत्ता पूर्ण निबंध पढ़े। डॉक्टर रीन भी इस अधिवेशनमें सम्मिलित हुए थे। जब उपस्थित प्रतिनिधि ताली बजा-बजाकर भिन्न भिन्न विद्वानोंके निबंधोंका अभिनंदन करते थे, तब वह चुपचाप बैठे हुए किसी समस्यापर गंभीर विचार कर रहे थे। जब उच्च कोटिके प्रायः

सभी विद्वान् अपना भाषण कर चुके, तब लोगोंपर यही प्रभाव प्रतीत होता था कि मिस्र देशका पक्ष-पोषक दल अधिक प्रबल रहा है। पाँचों निर्णायक सभापतियोंमेंसे भी अधिकांश इसी सम्मतिके थे। भारत और कैस्पियन सागरके तटवर्ती प्रांतोंके पक्ष-पोषक लोग कुछ-कुछ निराश हो चले थे। इसी समय डॉक्टर रीन वक्ताकी वेदीपर बड़ी गंभीरतासे आकर खड़े हो गए। उनके हाथमें कोई पुस्तकाकार निबंध नहीं था। डॉक्टर रीनकी प्रतिभाका, संपूर्ण सम्मेलन, क़ायल था; अतः लोग चुप होकर कौतूहलसे उनकी ओर देखने लगे। डॉक्टर साहबने बड़ी संजीदगीके साथ अपनी अंदरकी जेबसे, एक चाँदीकी डिबियामें लपेटकर रखा हुआ, वही ताड़का पत्ता निकाला। डॉक्टर साहबने, उसे हाथमें लेकर सात मिनटकी एक संक्षिप्त वक्तृता दी। इसमें उन्होंने ताड़पत्रका मज़मून लोगोंको सुनाकर सभासे अनुमति चाही कि यह अधिवेशन छः मासके लिये स्थगित कर दिया जाय, ताकि वह इस महत्त्व-पूर्ण विषयमें पूरी खोज कर सकें।

डॉक्टर रीनके वेदीसे उतरते ही लोगोंने खूब तालियाँ बजाकर उनका स्वागत किया। उन दिनों योरप-भरके वैज्ञानिक जी-जानसे इसी बातका यत्न कर रहे थे कि किसी प्रकार फ़ौलादकी बड़ी-बड़ी शिलाएँ बनानेका ढँग उन्हें ज्ञात हो जाय। अतः सभापति महोदयने, डॉक्टर रीनके इस प्रस्तावको लोगोंके सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत कर दिया। बहुत बड़े बहुमतसे डॉक्टर साहबका यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। विद्वानोंका यह भारी दंगल छः मासके लिये बर्ख़ास्त हो गया।

(३)

गोबरसे भली प्रकार पुते हुए एक कच्चे चबूतरेपर पं० गोपाल पंतद्र मरणासन्न अवस्थामें पड़े थे। उनके इष्ट बांधव उन्हें घेरे हुए थे।

ज़ोर-ज़ोरसे रो रहा था, कोई सिसक रहा था और कोई शोककी गंभीर मुद्रा धारण किए चुपचाप खड़ा था। सिरकी ओर ५-७ ब्राह्मण तुमुल स्वरमें विष्णुसहस्रनामका पाठ कर रहे थे। पंडितजीपर थोड़ी-थोड़ी देर ठहरकर गंगाजलके छींटे दिए जाते थे। एक छोटेसे बंद कमरेमें ये सब उपद्रव एक साथ किए जा रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि पंडितजीके हितैषी उनको इस कष्टकी दशामें अधिक देर तक रखना पसंद नहीं करते। अतः बीमारीको असाध्य जानकर उन्हें शीघ्रसे-शीघ्र भव-सागरसे पार उतार देना चाहते हैं। अभी तक पंडितजी मूर्च्छित पड़े थे, परंतु बार-बार गंगाजलके छींटोंका मज़ा लेकर उनकी चेतना थोड़ी देरके लिये पुनः जागृत हो गई। उन्होंने आँखें पलटकर धीरेसे पुकारा—"गिरिधर !"

गिरिधर उनका बड़ा पुत्र था। वह अपने मुँहको पिताकी आँखोंके एकदम निकट ले जाकर बोला—"क्या है, पिताजी ?"

कुछ देर तक शून्य-भावसे उसीकी ओर देखते रहकर पंडितजीने धीरे-धीरे कहना शुरू किया—"बेटा, कलियुगका घोर राज्य है। दुनियासे धर्म-कर्म उठ गया है। म्लेच्छ लोग राज कर रहे हैं। अब सुनता हूँ कि यह जो नई म्लेच्छजाति हम लोगोंपर राज्य करने आई है, वह हमारे धर्म-शास्त्रोंपर भी अनाचार करनेका निश्चय कर चुकी है। कुछ कुलांगार ब्राह्मण धनके लोभसे इनको संस्कृत पढ़ाने भी लगे हैं। मालूम होता है कि अब शीघ्र ही कलंकी अवतार होनेवाला है। यह तो अनाचारकी पराकाष्ठा हो चली !" इतना कहकर वह थोड़ी देरके लिये थककर चुप हो गए। पंडितजीको होशमें आया देखकर उनकी बात सुननेकी इच्छासे ब्राह्मणोंने थोड़ी देरके लिये विष्णुसहस्रनामका पाठ बंद कर दिया था। अब उनको चुप देखकर पाठका दौरा फिरसे ज़ारी हो गया।

थोड़ी देर बाद पं० गोपाल फिर बोले—"गिरिधर ! मेरे घरमें बड़े पुराने समयसे एक थाती चली आई है। अनादि कालसे हमारे पुरखा मृत्युके समय इसे अपने वंशधरोंको अर्पित करते चले आ रहे हैं। यह थाती 'धातुसार' नामक एक पुस्तकके रूपमें है। इसे भली प्रकार गुप्त रखना। आजकल म्लेच्छ लोग धनका लोभ देकर बड़े-बड़े प्रतिष्ठित ब्राह्मणोंसे भी इस प्रकारके ग्रंथ खरीद ले गए हैं। तुम कभी इस प्रकारका अनाचार न करना। बेटा, तुम्हें मेरी सौगन्ध है, इसे कभी किसी दूसरे व्यक्तिको न देना।"

इसके बाद पंडितजीकी शक्ति बहुत क्षीण हो गई। गिरिधरसे घरके सम्बन्धमें कुछ और बातें कहते-कहते उन्हें फिरसे मूर्च्छा आ गई। यह मूर्च्छा फिर कभी न टूटी।

(४)

पेरिससे वापस आते ही डॉक्टर रीन फिर भारतवर्षके लिये चल दिए। इस समय उनकी प्रसन्नता गंभीर चिंताके रूपमें परिवर्तित हो चुकी थी। उन्हें एक भारी उत्तरदायित्व-अनुभव हो रहा था। डॉक्टर साहबको इस महत्त्व-पूर्ण कार्यके लिये केवल छः मासका अवसर ही मिला था। उन्होंने सोचा कि तीन मास तो अपने देशसे भारतवर्ष आने-जानेमें ही व्यय हो जायँगे। फिर महासभासे कम-से-कम ढाई मास पूर्व यह पुस्तक अवश्य ही प्राप्त हो जानी चाहिए। इस प्रकार केवल दो मासमें ही उन्हें इस ज़रा-सी पुस्तकको सारे देशमेंसे ढूँढ़ निकालना था। फिर यह भी मालूम नहीं कि यह पुस्तक आजकल कहीं प्राप्य भी है या नहीं। पुस्तकका एक पृष्ठ इस प्रकारसे यों ही उड़ता हुआ मिलना, तो इसी बातका प्रमाण है कि शेष पृष्ठ अब नष्ट हो

चुके हैं। ये सब बाधाएँ सोचकर भी वह निराश नहीं हुए। मदरास-प्रांतमें पहुँचकर अपने मित्रकी सहायतासे वह अपनी खोजमें व्यस्त हो गए।

इस कार्यमें डॉक्टर साहबको बड़ी दिक़्क़तोंका सामना करना पड़ा। गाँवोंके लोग उनकी गोरी चमड़ीको देखकर उनसे भय खाते थे, उनके प्रश्नोंको सुनकर वे उनपर और भी अधिक संदेह करने लगते थे। उन्हें यह देखकर अत्यधिक आश्चर्य हुआ कि ये दरिद्रतापीड़ित, पराधीन और निर्धन लोग स्वयं नितांत दयनीय अवस्थामें होते हुए भी एक सभ्य विदेशीसे बीमारीकी तरह घृणा करते हैं। डॉक्टर साहब कभी-कभी बिलकुल अकेले साधारण भारतीय जनताका वेश धारण करके गाँवोंमें निकल जाते थे; परंतु इस प्रकार भी उन्हें कोई सफलता न हुई। मदरास-प्रांतमें उनके शरीरकी सफ़ेदी द्वारा लोगोंको झटसे म्लेच्छ होनेका ज्ञान हो जाता था। फिर सौभाग्यसे यदि उन्हें कोई म्लेच्छ न भी समझे, तो भी ब्राह्मण लोग शास्त्रके संबंधमें कोई बात बतानेको तैयार ही न थे और अन्य वर्णोंवाले शास्त्रके संबंधमें कुछ जानते ही न थे।

इस प्रकार निरर्थक श्रम करते हुए उन्हें डेढ़ मास बीत गया उनकी शारीरिक दशा भी ख़राब हो चली। एप्रिलका महिना था; अतः गर्मी पर्याप्त पड़ने लगी थी। डॉक्टर साहब कुछ-कुछ निराश हो चले। तब इन उपायोंसे काम चलता न देख, अपने कलक्टर मित्रका कहना मानकर वह मदरास नगरमें वापस चले आए। यहीं रहकर वह बहुत-से भारतीय ब्राह्मणोंद्वारा ही इस ग्रंथकी खोज करवाने लगे। कलक्टर साहब भी कुछ दिनोंका अवकाश लेकर बड़ी सरगर्मीसे इसी काममें लग गए।

एक सप्ताह बाद उन्हें एक आदमीसे ज्ञात हुआ कि मदरासले अस्सी मील दूर एक गाँवमें पं० गिरिधर पंतलु नामक व्यक्तिके पास एक प्राचीन शास्त्र है। उसी दिन दोनों मित्र उस गाँवकी ओर प्रस्थान कर गए।

दो दिन बाद सायंकालके समय दोनों मित्र उस गाँवमें पहुँचकर डाक-बँगलेमें ठहरे। वे भारतीय ब्राह्मणोंके स्वभावको भली प्रकार जानते थे। उन्हें ज्ञात था कि भारतके ईमानदार ब्राह्मणोंको डरा-धमकाकर उनसे कुछ प्राप्त कर सकना असंभव है। अतः उन्होंने एक और उपाय काममें लानेका निश्चय किया। पं० गिरिधर पंतलुको उसी समय बुलवा भेजा गया।

सूर्य डूबनेमें अभी कुछ देर थी कि पं० गिरिधर पंतलु डरते-डरते डाक-बँगलेपर पहुँचे। दोनों साहबोंने खड़े होकर उनका स्वागत किया। पंडितजीके लिये गोबरका चौका लगवाकर गद्दी लगाई गई थी, उन्हें उसीपर बिठाकर साहब लोग स्वयं एक चटाईपर बैठ गए।

डॉक्टर रीन संस्कृत जानते थे, उन्होंने संस्कृतमें ही प्रश्न करने प्रारंभ किए। ब्राह्मण देवता पहले तो एक म्लेच्छके सम्मुख संस्कृत बोलते हुए कुछ घबराए; परंतु फिर उन्होंने और कोई मार्ग न देखकर संस्कृतमें ही उत्तर देना शुरू किया। डॉक्टर रीनने एक लंबी भूमिकाके साथ पूछा—"आपके पास, जो प्राचीन धर्म-ग्रंथ हैं, उनके नामको कौन-कौनसे अक्षर सुशोभित करते हैं?"

पंडितजी घबरा गए। यह प्रश्न किस उद्देश्यसे किया रहा है—इसे वह न समझ सके। परंतु थोड़ी देरतक हिचकिचाते रहकर उन्होंने उत्तर दिया—"धातुसार।"

डाक्टर साहबका चेहरा प्रसन्नतासे खिल उठा। उनके पास जो पत्ता था, उसपर भी 'धातुसार' यही शब्द लिखा हुआ था। जबरदस्ती

अपने प्रसन्नताके आवेशको रोके रहकर उन्होंने अगला प्रश्न किया—
"वह पुस्तक किस चीज़पर लिखी हुई है?"

उत्तर मिला—"ताड़पत्रोंपर।"

डॉक्टर साहबने, फिर पूछा—"उसका आकार क्या है?"

पंडितजीको आज तक कभी इस प्रकार किसी चीज़के आकार, रंग, रूप आदिका वर्णन नहीं करना पड़ा था, अतः वह यत्न करनेपर भी अपना अभिप्राय स्पष्ट न कर सके। डॉक्टर साहबने, उन्हें असमञ्जसमें पड़ा देखकर अपनी जेबसे वही ताड़का पत्ता निकालकर उसे दिखाते हुए पूछा—"क्या आपकी पुस्तकका यही आकार है?"

उसे देखते ही पंडितजी चौंककर बोल उठे—"हैं! यह आपके पास कहाँसे आया? यह तो मेरी पुस्तकका ही पृष्ठ है।"

डॉक्टर रीनने, इस प्रश्नका उत्तर न देकर कलक्टर साहबकी ओर देखा। अपने प्रश्नके उत्तरकी अधिक देरतक प्रतीक्षा न करके पंडितजीने कहना शुरू किया—"पिताजीकी तेरहवींके बाद जब घरकी सफ़ाई की गई, तभी हमारे धर्म-ग्रंथका यह पृष्ठ न-जाने अचानक कहीं खो गया था। क्या आप यह पृष्ठ मुझे वापस करने आए हैं? साहब, आप लोग सचमुच बड़े दयालु हैं। यह मुझे लौटा दीजिए। आपका यह उपकार मैं जन्म-भर न भूलूँगा।"

यह कहते-कहते पंडितजीका चेहरा भयसे पीला पड़ गया। उन्हें याद आया कि पिताजी मरते समय अपनी क़सम खिलाकर जिस बातसे मुझे रोक गए थे, विधि-वश वह बात स्वयं ही हो गई। यह अभागा पत्ता न-जाने किस प्रकार इन म्लेच्छोंके हाथ जा लगा।

पंडितजीको चिन्ताकुल देखकर डॉक्टर साहबने दिल खोलकर हिन्दू-धर्मकी उदारताका बयान करते हुए संसारोपकारकी लंबी भूमिका बाँधकर

अंतमें कहा—" आप यह पुस्तक हमें दे दीजिए। सारा संसार इसके लिये आपका यश गाएगा। आपके इस महादानके प्रतिफलमें हम तुच्छ लोग आपकी कोई बड़ी सेवा तो कर ही नहीं सकते। हाँ, हमारी दस हज़ार रुपयोंकी दक्षिणा स्वीकार कीजिए।"

पंडित गिरिधर पंतद्ध दस हज़ारका नाम सुनकर अचंभेमें आ गए। उनकी पुस्तकका इतना अधिक मूल्य है! उन्होंने कभी कल्पनाद्वारा भी १० हज़ार रुपयोंके दर्शन न किए थे। परन्तु इस समय उन्हें अपने पिताके अंतिम वचन याद आए। दस हज़ारका बड़ा प्रलोभन उनके दिमाग़में प्रवेश न पा सका। उन्होंने पुस्तक देनेसे इनकार कर दिया, इनकार करते हुए उनकी जिह्वा लड़खड़ा रही थी।

डॉक्टर साहबसे पंडितजीकी कमज़ोरी छिपी न रह सकी। उन्होंने धीरे-धीरे बड़ी नम्र-भाषामें अपनी दक्षिणा बढ़ानी प्रारंभ की—" दस हज़ार! पन्द्रह हज़ार! बीस हज़ार! पच्चीस हज़ार! तीस हज़ार!"

परंतु पंडितजीके मुँहसे हाँ न निकल सकी। वह मसनदपर टेक लगाकर चुपचाप बैठे थे, लक़वेके बीमारकी तरह उनका सारा शरीर काँप रहा था। माथेसे पसीनेकी धाराएँ बह रही थीं; परंतु मुँह इस प्रकार बंद था मानों किसीने उसे ज़बरदस्ती भींच रखा हो। पंडितजीको इस हालतमें देखकर कलक्टर साहबके लिये हँसी रोकना असंभव हो रहा था, परंतु डॉक्टर रीन उसी प्रकार गंभीर-भावसे बैठे थे। स्वयं उनके अपने हृदयकी गति भी बहुत बढ़ गई थी—" कहीं यह ब्राह्मण क़ाबूमें न आ सका तो?"

जादूगरने जादूकी लकड़ी फिर हाथमें ली। प्रलोभन अब बड़ी-बड़ी छलाँगें मारने लगा। तीस हज़ारसे एकदम चालीस हज़ार हुआ। पंडि-

तजी अब भी चुप थे। चालीस हज़ारसे बोली सीधी पचास हज़ारपर पहुँची; पर पंडितजी अब भी न बोले।

डॉक्टर साहब एक ठंडी श्वास लेकर आगे बढ़नेसे रुक गए। उन्होंने अपनी संपूर्ण जायदाद नीलामपर चढ़ा दी थी। अब पंडितजीके लिये चुप रहना असंभव हो गया। वह काँपते हुए लड़खड़ाती आवाज़में बोले—"कल प्रातः आकर ले जाना।" मालूम होता है कि ये शब्द कहते हुए उन्हें अपनी सारी ताक़त लगा देनी पड़ी। वह बेहोश होकर वहीं गिर पड़े। उन्हें उठाकर घर पहुँचाया गया।

डॉक्टर साहबकी प्रसन्नताका पारावार नहीं था। उन दिनों तक तार-बर्कीका आविष्कार नहीं हुआ था, अतः डॉक्टर साहब अपने पेरिस तथा बर्लिनके मित्रोंको इस बातकी सूचना न दे सके। सारी रात डॉक्टर साहबको नींद न आई, वह इस प्रतीक्षामें थे कि लंबी रात समाप्त हो और वह उस उद्देश्यमें सफलता प्राप्त करें, जिसके लिये वह महीनों ख़ाक छानते रहे हैं।

(५)

प्रातःकाल होते ही १५-२० सिपाहियोंके सिरोंपर पचास हज़ार रुपया लदवाकर डॉक्टर साहब अपने कलक्टर मित्रके साथ पंडित गिरिधर पंतलूके घर पहुँचे। पंडितजीका घर एक लंबे-चौड़े मैदानके किनारेपर था। उस मैदानमें पहुँचते ही डॉक्टर साहबने विचित्र दृश्य देखा। उन्हें दूरसे दिखाई दिया कि केवल एक लँगोट बाँधकर ब्राह्मण देवता समाधि लगाए बैठे हैं, उनके सामने ज़मीनमें खुदे हुए एक बड़ेसे यज्ञ-कुंडमें प्रचंड अग्नि धधक रही है। गिरिधर अपनी जाँघोंपर एक बस्ता खोलकर बैठा हुआ बड़े गौरसे किसी चीज़को देख रहा है। किसी अज्ञात अनि-

ष्टकी आशंकासे डॉक्टर साहबका हृदय काँप गया। वह अपने साथियोंको छोड़कर बेतहाशा पंडितजीकी ओर भागे।

अचानक पंडितजीकी नज़र इन लोगोंपर पड़ी। इन्हें देखकर वह इस प्रकार चौंके, जैसे पागल कुत्ता पानीको देखकर चौंकता है। इसके अगले ही क्षण बिजलीकी तेज़ीसे पंडितजीने, वह संपूर्ण बस्ता एकदम आगमें डाल दिया। डॉक्टर साहबके वहाँ पहुँचने तक इस अभागे देशकी उस अमूल्य संपत्तिको आगकी लोभी ज्वालाएँ भली प्रकार चाट चुकी थीं। डॉक्टर साहब दोनों हाथोंसे अपना सिर पकड़कर यज्ञ-कुंडके किनारे ही बैठ गए! हिंदोस्तान सचमुच जादूगरोंका मुल्क है, इस बातका आज उन्हें प्रत्यक्ष प्रमाण मिल गया।

एक हिन्दू, बाक़ी दुनियाके लोगोंको इतना घृणित और हेय क्यों समझता है—यह बात डॉक्टर रीन मरते दम तक नहीं समझ सके।

सन्देह

दिल्लीमें मशहूर था कि इन्दुका जन्म किसी वेश्याके गर्भसे हुआ है। उसके जन्मके सम्बन्धमें अनेक किम्वदन्तियाँ प्रचलित थीं। कुछ लोगोंका कहना था कि चावड़ीबाजारकी एक रूप-वैभव-सम्पन्ना वेश्या उसकी माता है और संयुक्त-प्रान्तके एक ताल्लुकेदार उसके पिता। वेश्या होनेपर भी ताराका उस ताल्लुकेदारसे सच्चा प्रेम था, अतः वह उस प्रेमकी स्मृति-रूप इस बालिकाको अपने घृणित मार्गपर नहीं चला सकी। अन्य लोगोंका विश्वास था कि चावड़ी-बजारकी वह वेश्या उसकी मा नहीं है, बल्कि वेश्या-वृत्तिके लिये उसने इन्दुको कहींसे लाकर पाला-पोसा है। इन्दु किसी कुलीन घरानेकी लड़की है। विशेष अवस्थाओंसे बाधित होकर तारा वेश्यावृत्तिसे एकदम विरक्त हो उठी, जिससे इन्दुको उसने पूर्ण संयम और सदाचारकी शिक्षा दिलाई है। इसी प्रकार कुछ अन्य अफ़वाहें भी सुनी जाती थीं। इन्दुके जन्मके सम्बन्धमें चाहे कोई भी कल्पना सत्य हो, परन्तु इतना स्पष्ट था इन्दु अपने स्वभाव आदिकी दृष्टिसे किसी कुलीन कन्यासे कम न थी। रूप-लावण्यमें वह देवलोककी अप्सराओंका मुकाबला करती थी। उसकी आवाज़ वंशीकी ध्वनिके समान मधुर आकर्षक थी। उसका चरित्र सुवर्णकी तरह उज्ज्वल था। इतने पर भी सम्पूर्ण इन्द्रप्रस्थ नगरीमें उससे प्रेम करनेवाला कोई न था। उसके रूपके प्यासे सहस्रों थे, उसका मधुर गान सुननेकी चाह बूढ़ों तकको थी, परन्तु इन्दुको एक कुलीन बालिकाके समान निष्कलङ्क समझकर उसे अर्द्धाङ्गिनी बनानेका साहस सम्भवतः किसीमें न था। वह आगकी उस तेज ज्वालाके समान थी, जो सर्दियोंमें हाथ सेकनेका

काम तो दे सकती है, परन्तु उसे निश्चिन्त होकर घरमें स्थान देनेसे सम्पूर्ण घर ही भस्म हो जाता है।

इन्दु बिलकुल अकेली थी। इस दुनियामें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था, जिसे वह अपना कह सके। सम्भवतः उसे भी किसी अन्य व्यक्तिकी अपेक्षा न थी। अपने निर्वाहके लिये उसके पास काफ़ी धन था, इस-लिये उसे रहन-सहनके सम्बन्धमें कोई चिन्ता न करनी पड़ती थी। अपना समय काटनेके लिये उसके पास बेल-बूटे काढ़नेकी एक मशीन, कुछ चुने हुए उपन्यास और एक बढ़िया सितार था। उसके लम्बे-चौड़े घरके सम्पूर्ण पर्दे और मेज़पोश उसके अपने हाथकी कारीगरीका नमूना थे। दोपहरके बाद अपने मकानकी चौथी मंज़िलके एक बन्द कमरेमें वह सितारके साथ घंटों कोयलकी तरह कुहका करती थी। उसकी प्रसन्नताके लिये इतना ही काफ़ी था; इसीमें उसे पूर्णता अनुभव होती थी। वह किसी व्यक्तिसे बात करना भी पसन्द न करती थी। यहाँ तक कि नौकरानियोंसे भी अधिक न बोलती थी। दुनिया उससे भय खाती थी—उसे शंकित होकर देखती थी और वह दुनियासे घृणा करती थी—उसे तुच्छ समझती थी। इन्दुके यौवन-कालके प्रारम्भिक दिन इसी प्रकार कट रहे थे।

(२)

फरवरी मासके सायंकालका समय था। सर्दियोंकी समाप्तिके दिन थे। एक हलका-सा अलवान ओढ़कर इन्दु अपने मकानकी सबसे ऊँची छतपर खड़े होकर चाँदनीचौककी ओर देख रही थी। आज किसी उच्चतम सरकारी कर्मचारीका जुलूस लालकिलेसे निकलकर चाँदनीचौकसे गुज़र रहा था। इसके लिये बहुत दिनोंसे तैय्यारियाँ हो रही थीं। दिल्लीके जिस भागसे जुलूस गुज़र रहा था, उसे खूब सजाया गया था। चाँदनी-

चौकमें जुलूस पहुँचनेका समय ४।। बजे था। इन्दु अपने ऊँचे मकानकी छतसे यही दृश्य देखनेका यत्न कर रही थी। उसके मकानसे चाँदनी-चौक काफ़ी दूर था, अतः उसका अधिकांश भाग उससे ओझल था, केवल गलियोंके अन्तरालमेंसे बाज़ारका कोई-कोई भाग ही वह देख पाती थी। पहले बहुत देर तक लोगोंका कोलाहल सुनाई देता रहा। दूरसे कभी-कभी फ़ौजी गोरे घुड़-सवार दिखाई पड़ जाते थे। शायद अभी तक जुलूसका प्रबन्ध ही हो रहा था। उसके बाद शोरगुल लगभग समाप्त हो गया। केवल घोड़ोंकी टापोंकी आवाज़ आती रही, अब शायद गोरे घुड़सवार सड़कके दोनों ओर पंक्ति बनाकर खड़े हो रहे थे। थोड़ी देरमें सब ओर शान्ति व्याप्त हो गई। इस शान्तिमें दूरपर बैण्डोंकी आवाज़ धीरे धीरे अपनी ओर बढ़ती हुई सुनाई देने लगी। जुलूस आ पहुँचा। लोग थोड़ी-थोड़ी देर बाद जो तुमुल जयनाद करते थे, वह इन्दुके कानों तक पहुँच रहा था। उस समय उसे केवल जुलूसका शोर ही सुनाई दे रहा था और जुलूस मकानकी ओटमें होनेकें कारण उसकी दृष्टिसे छिपा हुआ था। शीघ्र ही इन्दु अनमनी-सी होकर सुदूर क्षितिजकी ओर देखने लगी। जुलूसकी ओरसे उसका ध्यान बिलकुल हट गया। दूरपर, जहाँ जमुना नदीके सूखे तटपर आकाश और भूमि मिल रहे थे, धूएँकी एक क्षीण रेखा दिखाई दी, इन्दु उसीकी ओर देखने लगी।

थोड़ी ही देरमें सहसा एक ऊँची आवाज़ सुनकर इन्दु इस प्रकार चौंकी, जिस प्रकार कोई ऊँघता हुआ व्यक्ति अचानक ठण्डे पानीका छींटा खाकर चौंक उठता है। अपने सामनेवाले मकानोंकी ओटमें, चाँदनीचौक़की सड़कपरसे उसे तोप छूटनेंकी-सी आवाज़ सुनाई दी। इसके साथ-ही-साथ उसे वहाँसे नीले रंगके धूएँका एक बड़ा-सा बादल उठता हुआ दिखाई दिया। दो-एक क्षण बाद ऊँची, चीखती हुई ध्वनिमें

'पकड़ो, पकड़ो'की आवाज़ें आने लगीं। घोड़ोंकी टापोंसे प्रतीत होता था कि फौज़ी घुड़सवारोंमें भी कुछ हलचल-सी मच गई है। एकदम न-जाने क्या उत्पात हो गया। इन्दुका हृदय कुछ शंकित-सा होकर अप्राकृतिक-रूपमें धड़कने लगा। वास्तविक घटना जाननेके लिये वह उत्कण्ठित हो उठी। इतना कौतूहल होते हुए भी अपने स्वभावसे लाचार होकर न तो वह घटनास्थलकी ओर जा सकी और न किसी नौकरानीको बुलाकर ही इस घटनाके सम्बन्धमें कुछ पूछ सकी। वह बहुत देर तक उत्सुकता-पूर्ण नेत्रोंसे सामनेके मकानोंको ओटमें छिपे हुए चाँदनीचौककी ओर देखती रही। पर्याप्त समय तक इसी प्रकार व्यर्थ-रूपसे ताकते रहनेके बाद वह छतसे उतरकर अपने मकानकी चौथी मंज़िलवाली बैठकमें चली गई। जब इन्दु छतपर गई थी तब वह इस बैठकका दरवाज़ा खुला छोड़ गई थी, अब लौटकर उसने देखा कि दरवाजा बन्द है। इन्दुने इसपर कुछ ध्यान न दिया, वह दरवाज़ा खोलकर अन्दर चली गई।

परन्तु अपनी मेज़के पास पहुँचने तक इन्दु अपनी बाईं ओरके पर्देको देखकर सहम गई। यह क्या है! साफ प्रतीत हो रहा था कि पर्देकी ओटमें कोई व्यक्ति खड़ा है। पर्देका मध्य-भाग कुछ फूला हुआ था। पर्देके नीचे नीले कालीनपर बादामी बूट पर्देसे बाहर निकले हुए दिखाई दे रहे थे। इन्दु यह कल्पनातीत दृश्य देखकर सहम गई। ये सब क्या अनहोनी घटनाएँ हो रही हैं! वह दो-एक मिनट तक हतज्ञान-सी खड़ी-खड़ी उस पर्देकी ओर देखती रही। पर्दा अभी तक उसी प्रकारसे स्थिर था। थोड़ी ही देरमें इन्दु सँभलकर अपनी किसी दासीको आवाज़ देने-ही-वाली थी कि पर्दा हट गया, उसके पीछेसे एक, सैनिक-वेश-धारी युवक बाहर निकल आया और उसने बड़ी नम्रतासे इन्दुको नमस्कार किया।

जब तक पर्देवाला व्यक्ति एक रहस्य था, इन्दु घबरा रही थी; परन्तु उस व्यक्तिके सामने आते ही उसकी घबराहट दूर हो गई। इन्दुने जबसे होश सँभाला था, तबसे किसी सभ्य पुरुषको उसने इतने समीपसे और इतनी अच्छी तरह न देखा था। वह सैनिक-वेश-धारी व्यक्ति खूब गम्भीर होकर इन्दुके पैरोंकी ओर देख रहा था और इन्दु जिज्ञासापूर्ण कौतूहलके साथ उसके मुँहकी ओर देख रही थी। थोड़ी देर तक इसी प्रकार देख इन्दुने बड़ी नरम आवाज़से पूछा—"कौन हो तुम ?"

सैनिक-वेश-धारी व्यक्तिने कुछ देर सोचकर धीरेसे उत्तर दिया—"ख़ूनी !"

इन्दुको उस व्यक्तिका चेहरा खूनीके समान भयंकर प्रतीत नहीं हो रहा था, अतः उसने उसी तरह स्थिर और शान्तस्वरमें फिर पूछा—"क्या मेरा खून करने आये हो ?"

उस रहस्यमय व्यक्तिने काँपती-हुई आवाज़में कहा—"नहीं।"

इन्दुने यह प्रश्न न करके कि फिर यहाँ तुम क्यों आये, उससे पूछा—"तो तुम खूनी कैसे हुए ?"

उस व्यक्तिने जवाब दिया—"अभी मैं खून करके आ रहा हूँ।"

"किसका ?"

"जिसका सरकार जुलूस निकाल रही थी।"

इन्दु कुछ स्तब्ध-सी हो गई। क्या यह आदमी अभी ख़ून करके आ रहा है ! इन्दुको यह एक पहेली-सी मालूम हुई। एक इतने सुन्दर और सौम्य चेहरेवाला व्यक्ति स्वयं कह रहा है कि मैं अभी-अभी खून करके आ रहा हूँ ! फिर खून भी एक ऐसे उच्च सरकारी कर्मचारीका, जिसे

दोनों ओरसे गोरी फौज़ने घेर रखा था। इन्दुको यह बात बिलकुल असत्य-सी जान पड़ी। उसे कुछ सन्देह होने लगा कि कहीं यह व्यक्ति पागल तो नहीं है। परन्तु थोड़ी ही देर पहले छतपरसे उसे एक ज़ोरका धड़ाका सुनाई दिया था, और उसके बाद 'पकड़ो, पकड़ो'की आवाज़ें भी आई थीं। इस समय तक चाँदनीचौकसे काफी हल्ला आ रहा था। अतः उस व्यक्तिकी बातको बिलकुल पागलपन कहकर भी नहीं टाला जा सकता था। कुछ देर तक इन्दु उस व्यक्तिकी ओर विस्मयसे देखती रही। उसने पूछा—"खून किस प्रकार किया?"

उस व्यक्तिने कुछ विचलित स्वरमें कहा—"बम फेंककर।"

दो-एक क्षण चुप रहकर उसने स्वयं ही कहना शुरू किया—"मैं आपका मकान कई वर्षोंसे जानता हूँ। मुझे माळूम था कि आपके इस कमरेमें आपको छोड़कर अन्य किसी व्यक्तिका प्रवेश नहीं है। अतः मुझे निश्चय था कि यदि मैं किसी प्रकार बम फेंकते ही इस मकानमें घुसकर शरण पा जाऊँ, तो पुलिस मुझे हज़ार यत्न करके भी नहीं पकड़ सकती। यद्यपि आज तक मेरा आपसे कभी साक्षात् न हुआ था तथापि यह मुझे पूर्ण विश्वास था कि यदि आपके घरमें घुसकर मैं आपसे शरण माँगूँ तो आप इन्कार न करेंगी।" नवयुवककी दृष्टि अभी तक इन्दुके पैरोंकी ओर ही थी।

इन्दुको यह सम्पूर्ण घटना एक अचम्भा-सी प्रतीत हुई। यद्यपि वह शेष संसारको हेय समझती थी—उसका जगत् उसी तक सीमित था—तथापि आज इस व्यक्तिको देखकर बाहरका जगत् उसे उतना परित्याज्य न जान पड़ा। इस व्यक्तिको देखकर, उससे बात करके इन्दुको एक नये प्रकारके उल्लासका अनुभव हुआ। दो समान अनुभवशील हृदयोंको परस्पर भावविनिमय करनेमें जो उल्लास प्राप्त होता है, वह इन्दुको आज

पहली बार अनुभव हुआ। उसका हृदय नवयुवकके लिये सहानुभूतिसे भर गया। परन्तु वह तो अपनेको हत्यारा बता रहा है! इन्दुने फिर पूछा—"तुम यह हत्याका व्यवसाय क्यों करते हो?"

वह सैनिक-वेशधारी व्यक्ति कुछ चकित-सा हो उठा। उसने सोचा, आश्चर्य है! इस अबोध नवयुवतीको हमारे क्रान्तिकारी-दलके सम्बन्धमें कुछ भी ज्ञान नहीं है। अपने दलके सब सिद्धान्तोंको एक ही वाक्यमें रखते हुए उसने कहा—"क्योंकि भारतवर्ष हमारा अपना देश है। यह जो दूसरी जातिके लोग उसपर शासन कर रहे हैं, लुटेरे हैं,—इनकी हत्या करनेसे ईश्वर प्रसन्न होगा।" अपने दलके सम्बन्धकी बात कहते हुए उसका स्वर आवेशपूर्ण हो उठा था।

इन्दुको यह उत्तर एक नवीन समस्याके समान जान पड़ा। उस नवयुवकके देश-भक्तिपूर्ण भावोंको वह उचित गम्भीरतासे न ले सकी। नवयुवक कुछ कहते-कहते आवेशमें आ गया है, यह देखकर इन्दु मुस्करा उठी। उसने प्रश्न किया—"अच्छा, तुम्हारा नाम क्या है?"

नवयुवकने उत्तर दिया—"महेश।"

इन्दुने कुछ मुस्कराकर बड़ी मीठी आवाज़से फिर पूछा—"अच्छा, खूनी साहब! अब क्या सलाह है?"

नवयुवक महेशने पहली बार इन्दुकी आँखोंसे आँखें मिलाकर बड़ी नम्रतासे कहा—"क्या आप आजके लिये मुझे अपने इसी कमरेमें आश्रय दे सकेंगी?"

इन्दुने शासनके स्वरमें कहा—"मुझे 'आप' न कहकर 'तुम' कहो!"

महेशके शरीरमें बिजली-सी घूम गई। उसे सूझ नहीं पड़ा कि वह क्या उत्तर दे। उसे अधिक देर तक असमञ्जसमें न रख इन्दुने फिर

कहा—"हाँ हाँ, तुम बड़ी खुशीसे मेरे यहाँ ठहर सकते हो।" महेश अभी तक स्तम्भित-सा खड़ा था। शायद वह यही विचार रहा था कि यहाँ रहना श्रेयस्कर है या यहाँसे चला जाना। यहाँसे बाहर निकलनेपर उसे पुलिसका भय था और यहाँ रहते हुए वह स्वयं अपनेसे डरता था। महेश इसी उधेड़-बुनमें था कि इन्दुने उसे पासवाली आराम-कुर्सीपर बैठनेको कहा।

(३)

मनुष्य परिस्थितियोंका दास है। वह खूब आगा-पीछा सोचकर किसी मार्गपर चलता है, परन्तु परिस्थितियाँ उसे जबरदस्ती कहीं और बहा ले जाती हैं। महेश क्रान्तिकारीदलके मुखिया लोगोंमें था। सम्पूर्ण दलमें वही सबसे अधिक साहसी व्यक्ति समझा जाता था। इसीसे उसे भारत-सरकारके उस उच्च कर्मचारीका बध करनेके लिये नियुक्त किया गया था। ठीक मौका पाकर उसने बम फेंका और बड़ी फुर्तीसे पहलेसे तय की-हुई स्कीमके अनुसार इन्दुकी सबसे ऊँची मंज़िलवाली बैठकमें जा छिपा। वहाँ पहुँचकर वह पुलिसकी नज़रसे रक्षा पा गया। इन्दुका मकान चाँदनीचौकसे इतनी दूरीपर था कि पुलिस उसपर सन्देह ही न कर सकती थी। यहाँ तक तो सब ठीक था, परन्तु इन्दुके मकानपर पहुँचकर महेश एक नई उलझनमें पड़ गया। जिसे वह हेय अथवा उपेक्षणीय वेश्या-पुत्री समझता था, वही इन्दु साक्षात् करनेपर उसे कुछ और ही जान पड़ी। वह क्रान्तिकारी दलका सदस्य था। अतः उसकी दृष्टिमें प्रारम्भहीसे यह संसार हिंसा, क्रूरता, अन्याय और अत्याचारका एक विशाल अजायब-घर था। कोमलता, दया आदि गुणोंको वह स्त्रैण समझकर पुरुषके लिये उन्हें कमज़ोरी समझता था। उसकी दृष्टिमें स्त्रियाँ अभागिनी और दयनीय थीं; विशेषतः इन्दुको तो वह सर्वथा हेय और उपेक्षणीय समझता था।

परन्तु आज इन्दुसे मिलकर उसे ज्ञात हुआ कि इस संसारका सबसे अधिक रोचक पहलू बिलकुल अबोधता और सरलतामें ही है। उसके सामनेसे मानो एक पर्दा उठ गया। पहलेका वही कठोर, शुष्क और नीरस संसार महेशके सामने एक नये रूपमें उपस्थित हुआ। इस नये परिवर्तनके बहावमें वह क्रान्तिकारी दलमें सम्मिलित होते समय ली गई अपनी पवित्र प्रतिज्ञाको भी भूल गया।

पूरे दो दिनों तक इन्दु और महेश एक साथ रहे। इन्हीं दो दिनोंमें उनमें परस्पर वह घनिष्ठ सम्बन्ध पैदा हो गया, जो बरसों तक एक साथ रहनेपर भी नहीं होता। इन दो ही दिनोंमें इन्दुका मानो 'काया-पलट' हो गया। घरकी सभी दासियाँ चकित थीं कि मालकिनको यह हो क्या गया! यद्यपि इन्दुने महेशको गुप्त रखनेका बहुत प्रयत्न किया था, तथापि उसकी प्रधान दासी नथियासे महेशकी उपस्थिति छिपी न रह सकी। नथियाने महेशकी चर्चा अन्य दासियोंमें कर दी। इसी बातको लेकर उनमें काना-फूँसी होने लगी, उन्होंने समझा कि मालकिन भी अब अपनी माता—पालिका—ताराके मार्गका अनुसरण करने जा रही हैं।

दो दिन बाद, रातके समय, महेश इन्दुसे विदा लेकर गोरखपुर जिलेमें चला गया। जाते समय वह इन्दुको अपनी यादगारमें अपने नामकी एक अँगूठी देता गया। इन्दुको उसने अपना गुप्त पता भी बता दिया। क्रान्तिकारी-दलके नियमानुसार महेशका यह कार्य एक अक्षम्य और मृत्यु-दण्डके योग्य अपराध था।

महेश एक धूमकेतुके समान अचानक इन्दुके एकाकी निवास-स्थानमें प्रकट हुआ था, दो दिन ही रहकर वह सदाके लिये इन्दुके पास एक स्मृति छोड़ गया। यह स्मृति इन्दुके लिये सुखद थी या दुःखद, इसका निर्णय करना कठिन है। परंतु एक बात निश्चित-रूपसे कही जा सकती

है, वह यह कि इस स्मृतिका प्रभाव आगकी एक तेज़ ज्वालासे कम नहीं था।

(४)

चरबीकी पाँच-सात बड़ी-बड़ी बत्तियाँ जलाकर एक तहखानेमें उजेला करके क्रान्तिकारी-दलके १२ मुखियाओंकी बैठक हो रही थी। जब कभी क्रातिकारी-दलका कोई सदस्य असाधारण साहसका कोई कार्य करता था तब इसी स्थानपर मुखिया लोग उसके मुँहसे वह सम्पूर्ण घटना सुना करते थे। आज महेशकी बारी थी। वह दिल्लीमें जिस उच्च राज-कर्म-चारीका खून करके आया था, उसकी हत्याका हाल सुननेको सम्पूर्ण मुखिया लोग उत्सुक हो रहे थे। आजसे पूर्व क्रान्तिकारी-दल किसी इतने उच्च अधिकारीका खून नहीं कर सका था, अतः आज मुखिया लोगोंमें असाधारण उत्साह था। यह रौद्र-रूप तहखाना एक जंगलमें था, अतः यहाँ बैठकर ये लोग निश्चिन्ततासे हो-हल्ला किया करते थे। ऐसी सभा-ओंमें सबसे पूर्व तेरहों मुखिया गीता हाथमें लेकर भारत-माताके नामपर यह शपथ किया करते थे—"हम पिछली बैठकसे लेकर आज तक बिलकुल पवित्र रहे हैं। संघके किसी नियमका हमने उल्लंघन नहीं किया है।" आज सरपञ्चकी अध्यक्षतामें एक-एक करके सभी अन्य मुखि-याओंने बड़े उत्साहके साथ यह शपथ ली; परन्तु अन्तमें जब महेशकी शपथ लेनेकी बारी आई तब सब मुखियाओंने आश्चर्यसे देखा कि उसका स्वर लड़खड़ा रहा है। उन्होंने समझा कि शायद हत्या करनेका पाप उसकी आत्माको भयभीत कर रहा है।

सरपञ्चकी आज्ञा पाकर महेश अपनी रामकहानी सुनानेको खड़ा हुआ। जुलूसपर बम फेंककर वहाँसे भाग जाने तककी कथा तो उसने बिलकुल सत्य-सत्य कह सुनाई, परन्तु इसके बाद उसने कहना शुरू

किया—" अपने फौजी वेशकी सहायतासे मैं चाँदनीचौकको चीरता हुआ लाल-किलेकी ओर चल दिया। इस समय सब ओर क्षोभ फैल चुका था। लोग 'पकड़ो, पकड़ो' चिल्ला रहे थे और मैं आरामके साथ चाँदनीचौकके ठीक बीचसे लाल-किलेकी ओर बढ़ा चला जा रहा था—" (इसपर *सभी मुखिया जोरसे हँस पड़े। सरपञ्चने कहा—'पुलिस कितनी बेवकूफ है'!*) महेशने फिर कहना शुरू किया—" अच्छा, तो आरामसे चलते हुए मैं लाल किलेके नज़दीक जा पहुँचा। उधर फौजके घुड़सवारोंने चाँदनी-चौकके सम्पूर्ण मकानोंको घेर लिया। मैं लाल-किलेके पास पहुँचकर बाईं ओर, रेलवे लाइनकी तरफ़, मुड़ने ही वाला था कि किलेमेंसे लगभग १५० गोरे सिपाही बन्दूकें हाथमें लिये बाहर निकले। शायद ये लोग भी शोरगुल सुनकर ही बाहर आये थे। मैं एक क्षणके लिये तो बिलकुल घबड़ा गया, परन्तु दूसरे ही क्षणमें सँभलकर मैंने ऊँची आवाज़में अँग्रेजीमें कहा—' चलो, चलो, सेनापतिका खून हो गया।' यह सुनते ही सभी गोरे बिना 'फाल-इन' किये चाँदनी-चौककी ओर दौड़ पड़े।" (इसपर फिर कहकहा पड़ गया।)

मालूम होता है कि महेश अपनी शेष कहानी एक ही वाक्यमें समाप्त कर डालना चाहता था, अतः उसने बिना ठहरे ही कहा—" हाँ, तो उन लोगोंको चाँदनीचौककी ओर भागते देखकर मैंने दो-एक क्षण तो खूब प्रसन्नता अनुभव की। पर थोड़ी ही देरमें मुझे फिर अपने बचावकी चिन्ताने आघेरा। इसी समय मुझे दिखाई दिया कि किलेके पासकी सूखी खाईमें शराबका एक पुराना लकड़ीका पीपा पड़ा है। मैं धीरे-धीरे गढ़ेमें उतरकर उसी खोलमें घुस गया। यह बात बहुत अच्छी हुई, क्योंकि थोड़ी ही देरमें मुझे फौज़ी घुड़सवारोंके एक दलके उधर ही आनेकी आवाज़ सुनाई दी। बस, मैं दो दिन तक उसी शराबके पीपेमें दम

साधकर पड़ा रहा।" (इसपर सभी मुखियाओंने जयध्वनि की। सरपञ्चने कहा—'बड़े साहसका काम है।') क्रान्तिकारी-दलमें अपने सरपञ्चके मुँहसे साधुवाद पाना सबसे बड़ा सम्मान समझा जाता था; परन्तु महेश सरपञ्चके मुँहसे यह साधुवाद सुनकर पुलकित नहीं हुआ, अपितु उसका मुँह पीला पड़ गया। उसने काँपती हुई आवाज़में फिर कहना शुरू किया—"दो दिन बाद रातके समय मैं उस पीपेसे बाहर निकलकर इस प्रान्तमें चला आया। बस, यही मेरी आत्म-कहानी है।" अन्तिम वाक्य कहते हुए वह इतनी जोरसे काँपा कि सब मुखिया लोगोंने उसकी ओर आश्चर्यसे देखा। सरपञ्चने उसके चेहरेपर आँखें गड़ाकर पूछा —"क्या कुछ तबीयत खराब है?"

महेश ज़बानसे कुछ उत्तर न दे सका। उसने सिर्फ़ सिर हिलाकर इशारा किया—"हाँ।"

इसके बाद दो-चार और कार्रवाई करके महेशको 'सहकारी सरपञ्च'की उपाधि दी गई।

उन दो दिनोंके बाद फिर इन्दु महेशसे मिल नहीं सकी। इन्हीं दो दिनोंमें इन्दुके लिये यह संसार एक नया रूप धारण कर चुका था। यद्यपि महेश स्वयं फिर कभी उससे मिलने नहीं आ सका, फिर भी उसके प्रणय-पत्र इन्दुको समयसमयपर अवश्य प्राप्त होते रहे। महेशका पत्र देनेका तरीक़ा साधारण न होकर विशेष हुआ करता था। ये पत्र प्रायः किसी चीज़के रजिस्टर्ड पार्सलमें ही आया करते थे। इन्दु भी इसी प्रकारके किसी अन्य साधन-द्वारा उन पत्रोंका उत्तर दिया करती थी।

परन्तु पीछे महेशके पत्र आने सर्वथा बन्द हो गये। इन्दु प्रतिदिन उन विशेष लेबलवाले पार्सलोंकी प्रतीक्षा घण्टों तक किया करती थी,

परन्तु डाकमें उसे वे पार्सल कभी प्राप्त न होते थे। संकोचवश वह कभी डाकियेसे पूछ भी न सकती थी। महेशके पत्र न मिलनेके कारण वह सोचती थी कि कहीं महेश किसी आपत्तिमें तो नहीं फँस गया। महेशके पिछले भयंकर कारनामोंका ख्याल करते ही उसके रौंगटे खड़े हो जाते थे।

माळूम नहीं इसका वास्तविक कारण क्या था। हमारा ख्याल है कि इसका कारण महेशके हृदयकी प्रतिक्रिया थी। महेश क्रान्तिकारी दलका सदस्य था। अनेक वर्षोंसे वह जिस मार्गको दुर्बलताका मार्ग समझता था, आज भाग्यवश वह स्वयं उसी मार्गका राही बन गया था; परन्तु अवस्थाओंके प्रभावसे उसकी यह दशा बहुत दिनों तक कायम न रह सकी। इस नये नशेका प्रभाव उसके प्राचीन, वर्षोंके अनुशीलनके बाद स्थिर किये विचारोंकी टक्कर न ले सका। जिस प्रकार रबरकी गेंद पक्की चट्टानपर ठोकर खाकर फिर उतने ही वेगसे ऊपरको उठती है, उसी प्रकार महेशका हृदय इन्दुसे कुछ विरक्त-सा होने लगा। पिछले दिनों उसके जीवनमें बड़ी-बड़ी घटनाएँ हुई थीं। वह अपने महान् कार्यमें सफल हुआ था। अपने दलमें उसकी इज्जत बढ़ गई थी। सरपञ्च उसपर फ़िदा था। सम्पूर्ण अन्य मुखिया भी उसकी धाक मान गये थे। यह सब कुछ था, परन्तु उसके अपने हृदयमें अपना मान पहलेकी अपेक्षा घट गया था। वह सोचता था कि मैं अचानक ही अपनी महान् और पवित्र प्रतिज्ञाका भंग कर बैठा। सबसे बढ़कर उसके हृदयको यह बात व्यथित कर रही थी कि वह गीता हाथमें लेकर, अपनी दुखिया जन्मभूमिकी शपथ खाकर, स्वयं सरपञ्च-परमेश्वरके सम्मुख रहते हुए भी झूठ बोला। इन्दुकी याद आते ही ये सब बातें स्वयं उसके ध्यानमें आ जाती थीं। शायद इसी कारण उसने इन्दुसे पत्र-व्यवहार

बन्द कर दिया हो। प्रेम-मार्गके अनुभवी हृदय इस बातको महेशकी हृदयकी कमज़ोरी कह सकते हैं, परन्तु हमारे विचारमें इसका कारण महेशकी इस नये मार्गसे अजानकारी ही है। यह मानना पड़ेगा कि इस सम्बन्धमें इन्दु महेशकी अपेक्षा कहीं अधिक श्रेष्ठ थी।

साथ ही यह भी बहुत सम्भव है कि महेशके इस प्रकार सहसा पत्र-व्यवहार बन्द कर देनेका कारण उसके हृदयकी प्रतिक्रिया न होकर कोई और अस्थिर बाधा हो।

(६)

जुलूसपर बम फेंकनेके मामलेका अन्वेषण ख़ुफ़िया पुलिस बड़ी मुस्तैदीसे कर रही थी। सम्पूर्ण भारत-साम्राज्यकी पुलिसके नामी-नामी कार्यकर्त्ता दिल्ली बुला लिये गये थे। बड़ी तत्परतासे खोज की जा रही थी। दिल्ली और उसके आस-पासके इलाकेसे लगभग ३०० नवयुवक सन्देहमें गिरफ्तार कर लिये गये। पुलिसने खूब हाथ साफ़ किये। मज़ा तो यह था कि इन भले मानसोंने दिल्लीके ११ घरोंमेंसे बम बनानेका सामान बरामद कर लिया! लोगोंकी नाकमें दम आ गया था। पुलिस इतनी वहमी हो गई थी कि उसे नस्यकी पुड़ियापर भी विस्फोटक द्रव्य होनेका सन्देह होता था! इतना ही नहीं, दिल्लीके आठ-दस उत्साही, परन्तु अप्रसिद्ध नवयुवकोंके घरोंसे पुलिसने बम फेंकनेके सम्बन्धमें एक पूरा पत्र-व्यवहार भी बरामद कर लिया! इस पत्र-व्यवहारके सम्बन्धमें मेरठ, लखनऊ और बाराबङ्कीके कुछ नवयुवक भी गिरफ्तार हुए। उदाहरणके लिये, मेरठके एक २७ वर्षके व्यक्तिने अपने दिल्लीस्थ भाईको लिखा था—"घरवालोंने लल्लूको बल्लेका बड़ा शौकीन बना दिया है। अब इसको एक खूब बढ़िया-सा बल्ला ले दो, तभी वह तुम्हारी बात मानेगा।" पुलिस इस पत्रमें 'बल्ले' का अर्थ बम और 'लल्लू'का अर्थ

सरकारी अधिकारी करती थी। इसका सबसे बड़ा सबूत यह था कि यह पत्र उस व्यक्तिके ज़ेवरके ट्रंकमें मिला था। पुलिस कहती थी कि यदि बल्लेका अर्थ बम नहीं, तो इस चिट्ठीको इतना सुरक्षित रखनेकी क्या आवश्यकता थी?

खुफिया पुलिस इतनी मुस्तैदी दिखा रही थी; परन्तु उसके मुख्य अध्यक्ष मि० विलियम फ़िच और उनके सहायक मि० बोस पुलिसके इन कारनामोंसे खुश न थे। मि० बोस तो पुलिसपर बेतरह खफ़ा थे। उनका विचार था कि पुलिस ये पाजीपनेके कार्य करके, जनतामें व्यर्थका त्रास फैलाकर, हमारे वास्तविक काममें बाधा डाल रही है। फ़िच साहबका वास्तविक मत तो यही था, पर वह उस दिनकी बम-दुर्घटनासे इतने सख्त नाराज़ थे कि क्रान्तिकारियोंका बदला जनतासे ले रहे थे। धोबीका क्रोध अपने गधेपर निकल रहा था। स्कूलमास्टर जिस प्रकार अपनी पत्नीसे लड़-झगड़कर, उसका बदला गणितके अवरमें अपने विद्यार्थियोंसे लिया करते हैं, उसी प्रकार मि० फ़िच क्रान्तिकारियोंका बदला जनतासे ले रहे थे। उनका ख्याल था कि आखिर क्रान्तिकारी लोग पैदा तो इसी कम्बख्त जनतासे ही होते हैं न!

उन दिनों भारतकी सम्पूर्ण खुफिया-पुलिसमें सबसे अधिक कार्य-कुशल व्यक्ति मि० बोस ही थे। मि० बोसका वैयक्तिक सहायक कृष्णकान्त नामका एक व्यक्ति था। उसकी जन्मभूमि युक्त-प्रान्तमें ही थी। वह बड़ा ही हँसमुख, बातूनी और कार्य-कुशल था। पहले वह एक नाटक-कम्पनीमें मखौलियेका कार्य किया करता था, परन्तु उसकी उपयोगिता पहचानकर मि० बोसने एक ऊँची तनख्वाहपर उसे अपना वैयक्तिक-सहायक बना लिया था। किसीसे घनिष्ठता स्थापित कर लेना उसके लिये बायें हाथका खेल था। उसका स्वरूप बहुत लुभावना था, अतः

उसपर सरलतासे कोई सन्देह न कर सकता था। कृष्णकान्त भले आदमीका वेश धारण करके दिल्लीमें टोह लेने लगा; कभी वह ब्राह्मणका वेश बनाता, कभी व्यापारीका और कभी शौकीन बाबुओंका। मि० बोस स्वयं भिखारीका वेश बनाकर दिल्लीकी गलियोंमें घूमने लगे। कृष्णकान्त अपने दिन-भरके भ्रमणका वृत्तान्त मि० बोसको सुना दिया करता था।

एक दिन कृष्णकान्त-द्वारा मि० बोसको ज्ञात हुआ कि जिस दिन जुलूसपर बम फेंका गया था, उसी दिन इन्दु नामकी एक वेश्या-पुत्रीके पास एक सुन्दर-सा नवयुवक आकर ठहरा था। दो दिन तक इन्दुके पास रहकर वह न जाने कहाँ चला गया। मि० बोसने आश्चर्यान्वित-सा होकर पूछा—"कौन इन्दु?"

कृष्णकान्तने इन्दुका ठीक-ठीक पता बता दिया। मि० बोस इन्दुके जीवनसे भलीभाँति परिचित थे। उसकी पालिका तारासे उनकी अच्छी घनिष्ठता थी; परन्तु यह बात उन्होंने कृष्णकान्त तक भी प्रकट न होने दी। अनुभवी खुफिया मि० बोसके चेहरेपर आशाकी एक रेखा दौड़ गई।

अगले ही दिन वह भिखारीके वेशमें इन्दुके घरके समीप पहुँचे। इन्दु उस समय एक खिड़कीके नज़दीक बैठी बड़े चिन्ताकुल-रूपमें किसी चीज़की ओर एकटक निहार रही थी। मि० बोस आजसे दो-एक वर्ष पूर्व भी उसे देख चुके थे। उनकी तेज़ दृष्टिने शीघ्र ही पहचान लिया कि आजकी इन्दु पहलेकी इन्दु नहीं है। वह गलीमें धीरे-धीरे टहलते हुए कुछ देर तक किसी समस्यापर विचार करते रहे। इसके बाद उन्होंने बड़े जिज्ञासापूर्ण नेत्रोंसे इन्दुकी ओर देखा। उसी समय इन्दुने सिरका [illegible]रण ठीक करनेके लिये अपना बायाँ हाथ हिलाया। मि० बोसने

बड़ी प्रसन्नताके साथ देखा कि वह बायें हाथकी अनामिकामें सोनेकी एक अँगूठी पहने है। न-जाने क्या सोचकर मि० बोस बड़ी प्रसन्नतासे अपने स्थानकी ओर लौट गये। किसी और बातका अन्वेषण करनेकी उन्होंने आवश्यकता न समझी।

(७)

इस घटनाके एक सप्ताह बाद ही इन्दुके हाथसे वह अँगूठी खो गई। उन्हीं दिनों एक नई दासी घरकी सफाईके लिये इन्दुके यहाँ नियुक्त हुई थी। यह दासी बहुत वृद्धा और गरीब थी, इसपर किसी प्रकारका सन्देह करना असम्भव था। इन्दु आजकल पहलेसे ही उदास रहती थी, अँगूठीके खो जानेसे उसे और अधिक दुःख हुआ। पर उसे किसीपर सन्देह न हुआ, उसने समझा कि उसकी अँगूठी अचानक कहीं गिरकर खो गई है।

वह अँगूठी मि० बोसके हाथमें पहुँची। उन्होंने देखा कि उसपर 'महेशाचन्द्र' नाम अंकित है। मि० बोसने अपनी प्राइवेट नोटबुकके पन्ने पलटकर देखा तो उन्हें किसी प्राचीन घटनाके नीचे अन्य बहुतसे नामोंके साथ 'महेशाचन्द्र' नाम भी प्राप्त हुआ। नोटबुकमें महेशाचन्द्रके लिये ये चार विशेषण अंकित थे—'नवयुवक, साहसी, सुन्दर, क्रान्तिवादी।' मि० बोसका हृदय बल्लियों उछलने लगा। उनके दिलमें विश्वास बैठ गया कि हो-न-हो, इस बम दुर्घटनामें इस महेशाचन्द्रका हाथ अवश्य है।

परन्तु इस महेशाचन्द्रका पता किस प्रकार मालूम किया जाय? मि० बोस बड़ी गम्भीरतासे दो-तीन दिनों तक इसी समस्यापर विचार करते रहे। वह इन्दुको भलीभाँति जानते थे। उन्हें ज्ञात था कि इन्दुका हृदय एक कुलीन हृदय है। वेश्याओंको धनसे असीम प्यार होता है। अतः उन्हें धनका लोभ देकर कोई बात आसानीसे जानी जा सकती है। साधारण स्त्रियाँ भी यदि किसी लोभसे नहीं तो किसी अन्य भयसे कोई रहस्य खोल सकती हैं। मि० बोस जानते थे कि इन्दुकी गणना सामा

स्त्रियोंमें नहीं की जा सकती। उनकी यह दृढ़ धारणा थी कि इन्दु किसी प्रकारके लोभ अथवा भयसे महेशके सम्बन्धमें कोई बात नहीं बतावेगी। जिन हृदयोंपर लोभ और भय असर नहीं कर सकते, वे हृदय सचमुच जगत्-भरके लिये बन्दनीय होते हैं।

खुफिया पुलिसके लोगोंका वेश्याओंसे बहुत काम निकलता है। अतः मि० बोसने इन्दुकी पालिका तारासे अच्छा परिचय कर रखा था। उन दिनों उन्होंने इन्दुको एक नन्ही बालिकाके रूपमें देखा था। उन दिनों भी इन्दुकी आँखोंसे लज्जा और विरक्तिका भाव टपका करता था। उन्हीं दिनोंसे मि० बोस उसे सम्मानकी दृष्टिसे देखने लगे थे। पीछे जब इन्दु नवयुवती होकर संसारसे विरक्त-सी होकर रहने लगी तब उनके दिलमें उसके प्रति सम्मानका भाव और भी अधिक बढ़ गया। हमारा अनुमान है कि मि० बोस ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जो इन्दुके जन्मकी वास्तविकतासे अवगत थे। यही कारण था कि वे उसे साधारण बालिका नहीं समझते थे। मि० बोसका ख्याल था कि इन्दु आजीवन अकेली रह अपनी आयु बिता देगी, परन्तु उनका यह विचार ठीक सिद्ध न हुआ। इन्दुने प्रेम किया और बिलकुल अचानक, बिना किसी पूर्व परिचयके, प्रेम किया। दो दिन ही उसके पास रहकर उसका प्रेमी चला गया। अब न जाने वह लौटेगा या नहीं। भाग्यवश इन्दुने एक ऐसे व्यक्तिसे प्रेम किया, जिसका भूत भयंकर था और भविष्य सन्दिग्ध। परन्तु मि० बोसको यह पूर्ण विश्वास था कि चाहे जो हो, इन्दु अब इस जीवनमें अपने प्रणयीको भुला न सकेगी।

मि० बोस साधारण मनोविज्ञानसे पूरी तरह अवगत थे। उन्हें ज्ञात था कि सच्चा प्रेमी अपने प्रणयीका कभी अनिष्ट नहीं कर सकता; स्वयं मृत्यु तकका आलिङ्गन करके वह अपने प्रणयीको बचाता है। सच्चा प्रेम त्यागमूलक है, भोगमूलक नहीं। प्रेम और स्वार्थ एक ही हृदयमें नहीं सकते। इन्दु एक सच्ची प्रणयिनी थी। अतः मि० बोसके सम्मुख

यह एक विषम समस्या-सी आकर खड़ी हो गई कि वह उसके द्वारा महेशके सम्बन्धमें किस प्रकार जानकारी हासिल कर सकते हैं। तीन दिन तक मि० बोस बड़ी गम्भीरतासे इसी समस्यापर विचार करते रहे। अन्तमें उन्हें एक उपाय सूझ ही गया। सच्चे प्रेमको परास्त करनेके लिये उन्होंने एक बड़े ही अमानुषिक उपायका अवलम्बन किया।

(८)

२५ हज़ार रुपया इनाम

गत २६ फरवरीको चाँदनीचौकमें "........." की हत्या करके महेशचन्द्र नामक एक व्यक्ति कहीं लापता हो गया है। इस व्यक्तिका रंग सफेद, चेहरा गोल, आँखें बड़ी-बड़ी, कद लम्बा और शरीर गठा हुआ है। देखनेमें एक सुन्दर नौजवान प्रतीत होता है। यह व्यक्ति इलाहाबादमें एक वेश्याके यहाँ पकड़ा ही जानेवाला था कि अचानक भाग निकला। तीन दिनसे वह वेश्या भी गुम है, सम्भवतः उसीके पास पहुँच गई है। वेश्या खूब रूपवती है। उसके बाँयें हाथकी कलाईपर उर्दूमें 'रहमतुन्निसा' नाम खुदा हुआ है। इन दोनों व्यक्तियोंमें परस्पर अनुचित सम्बन्ध है। जो व्यक्ति महेशचन्द्रको जीवित पकड़वा देगा या उसका पता बतायेगा, उसे २५ हज़ार रुपया इनाम दिया जायगा। रहमतुन्निसाको पकड़नेवाले व्यक्तिको ५ हज़ार रुपया इनाम दिया जायगा।

—सिटी मजिस्ट्रेटकी आज्ञासे।

पूर्वोक्त घटनाके दो दिन बाद दिल्लीके प्रत्येक बाज़ार और मुख्य-मुख्य गलियोंमें जगह-जगह दिल्लीके सिटी मजिस्ट्रेटके हस्ताक्षरोंसे लाल रंगके बड़े-बड़े पोस्टर चिपके हुए पाये गये। इन्दुके घरके दरवाज़ेके ठीक सामने भी ऊपर दिया हुआ एक पोस्टर चिपका हुआ था।

दोपहरके समय भोजनके बाद इन्दु अनमनी-सी होकर बाहरकी ओर देख रही थी कि अचानक उसकी नज़र सामनेके लाल पोस्टरपर पड़ी। पोस्टर बड़े-बड़े अक्षरोंमें लिखा था, अतः वह उसे वहीं बैठे-बैठे पढ़ने लगी। उफ़, यह क्या! इन्दुपर यदि अचानक कोई तमञ्चेका वार करता तो भी वह इतनी स्तम्भित और भयभीत न होती, जितना वह पोस्टरको पढ़कर हुई। वह पोस्टर क्या पढ़ रही थी मानो हालाहल विषका प्याला पी रही थी। सारा पोस्टर पढ़ जानेपर भी उसे अपनी आँखोंपर विश्वास न हुआ। क्या यह स्वप्न है? इन्दु फिर पढ़ने लगी; उसके सर्वनाशका मूर्त्तिमान् प्रमाणपत्र उसी प्रकार निश्चल होकर चिपका हुआ था। एकाएक यह क्या हो गया? इन्दु पोस्टरको दुबारा समाप्त न कर सकी, एक हल्की-सी चीत्कारके साथ वह मूर्च्छित हो गई। उसके प्रेमी हृदयकी रग-रगमें सन्देहका हालाहल विष व्याप्त हो गया! मालूम होता है, उसका दिल टूट गया था!

इन्दुके मूर्छित होते ही उसकी दासियोंने आकर उसे घेर लिया। इन्दु बेहोशीमें ही बड़बड़ाने लगी—"हाय! इतना विश्वासघात!.... मनुष्य इतना विश्वासघाती!........कल्पनातीत!" इसी प्रकार वह बहुत-सी असंगत बातें बड़बड़ाने लगी। इसी बड़बड़ाहटमें वह महेशका नाम भी बोल गई।

मि० बोसका विचार था कि सन्देहके विष-द्वारा प्रेमका प्रभाव नष्ट करके वह इन्दुसे उसका पता पूछ लेंगे। परन्तु यह मात्रासे अधिक दे दिया गया था। मि० बोसको इन्दुसे स्वयं बात करनेकी आवश्यकता भी न पड़ी।

* * *

इस घटनाके एक मास बाद ही समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुआ कि महेशचन्द्र नामका एक क्रान्तिकारी अपने छः सहायकोंके साथ गोरखपुर ज़िलेमें गिरफ्तार हुआ है।

समाप्त।